ओ३म्

# भक्ति का मार्ग

अर्थात्

सन्ध्या, अग्निहोत्र, प्रार्थना, उपासना के अतिरिक्त योगाभ्यास के पूर्व-साधन सविस्तर दिए गए हैं।

सम्पादक—

पं० चन्द्रभानु उपदेशक।

प्रकाशक—

लाला दौलतराम ऐण्डसन्ज़

पुस्तक विक्रेता लुहारी दरवाज़ा, लाहौर

ने

प्रकाशित किया।

मुद्रक—पञ्जाब प्रिंटिङ्ग वर्क्स, लाहौर।

प्रथमबार १०००] संवत् [illegible] विक्रमी [मूल्य ॥)

इस प्रकार की पुस्तकें मिलने का पता

# भूमिका।

प्रत्येक धर्म्म में आत्मिक शान्ति प्राप्त करने के लिये कोई न कोई उपाय अवश्य अवलंबन किया गया है। कोई मतवादी किसी प्रकार और कोई किसी प्रकार एक महानशक्ति की अवश्य पूजा करते हैं। प्राचीन आर्यावर्त में सृष्टि के आरम्भ से लेकर जो जाति अब तक निवास करती आई है उसे आर्य कहते हैं और उसने जो उपाय उस महानशक्ति की पूजा का निकाला है वह संध्या नाम से आर्य्यावर्त या भारतवर्ष में सुप्रसिद्ध ही है। संध्या का दो समय ही होना प्राचीन ग्रन्थों से प्रमाणित होता है। कई विद्वानों का यह मत है कि संध्या तीन समय ही होनी चाहिये क्योंकि प्रातःकाल शीत का अन्त, मध्यान्ह गर्मी की पूर्ण अधिकता और सायं काल गर्मी का अन्त होता है। ऐसी युक्ति श्रीमान् पंडित शिवकुमारजी शास्त्री गोरखपुर निवासी ने अपनी संध्या में लिखी है। यह युक्ति जिस बल पर स्वयं आश्रित है वह सारा लेख पढ़ने से पाठकों को स्वयं ही विदित हो सकता है, परन्तु हमें खंडन करने से यहां कोई प्रयोजन नहीं है। केवल इतना ही लिखते हैं कि सर्दी का अन्त तथा गर्मी का अन्त या प्रातः और संध्या ये दोनों समय तो सापेक्ष ठीक हुए परन्तु गर्मी की पूर्णाधिकता यह तथा दोपहर का समय आपने किस युक्ति से निकाला। अस्तु।

इस पुस्तक में ऋषि दयानंद कृत पंचमहायज्ञविधि तथा नित्यकर्मपद्धति आदि से चुनकर प्रातःकाल के प्रार्थना के मंत्र संध्या और उपासना तथा प्राणायामविधि अर्थो और व्याख्या सहित लिखी गई है। विशेष कर परमात्मा के सामने निरभिमान पूर्वक बैठकर जो सच्ची आत्मा से प्रार्थना निकल सकती है वह पं० चन्द्रभानु जी ने बड़ी योग्यता पूर्वक लिखी है। बीच २ में गाने के योग्य ईश्वरस्तुति के भजन हैं। यदि प्रत्येक आर्य परिवार में प्रतिदिन विधि पूर्वक संध्योपासना, प्रार्थना, प्राणायाम, हवनादि हुआ करें तो मनुष्यों को बहुत कुछ आत्मिक शान्ति लाभ हो सके। जो पुरुष अपने रचने वाले, पालन पोषण करनेवाले सब रक्षकोंके रक्षक और श्रेष्ठोंके प्रभु को नित्य प्रातःसायं विशुद्ध अन्तःकरण से स्मरण नहीं करता, उसकी उन्नति इस क्षणभंगुर जीवन में होनी बहुत कठिन हो जाती है। मनुष्य विना सहायता के कुछ भी नहीं कर सकता। इसलिये जो परमसहायक है उसका मनोमन्दिर में प्रतिदिन जो आदर करते हैं, जो उनको अपने पवित्र हृदय के सिंहासन पर नित्य ही बिठाकर दर्शन करते हैं उन्हें कौनसी वस्तु अप्राप्य हो सकती है। इसलिए भगवान को प्रतिदिन संध्योपासना द्वारा पूजा-सत्कार करना आर्यमात्र का कर्तव्य है। ऐसी पुस्तकों की सब समय ही आवश्यकता है, जितना इस प्रकार की पुस्तकों का प्रचार बढ़ेगा उतना ही मनुष्य समाज दिन २ सुखी होता जायगा।

कविराज—श्रीविद्याधर विद्यालंकार

आयुर्वेदशास्त्री रसाला बाजार, लाहौर।

ओ३म्

# * भक्ति का मार्ग *

१—यह ज्ञात हो कि प्रार्थना वही फलदायक हुआ करती है जो सच्ची हो, और सच्चे हृदय से की जाय. सच्ची प्रार्थना तब समझी जाती है कि जिन वस्तुओं के लिए प्रार्थना की जाय, उन की प्राप्ति के लिए पूरा २ यत्न भी किया जाय।

२—आचमन मन्त्र में जो शान्ति की प्रार्थना की गई है, यह भी तब ही सफल होगी, जब के हम प्रार्थना के पश्चात् पूरे २ शान्त होजावें मानो सचमुच ही शान्ति का घूंट पी लिया है।

३—इन्द्रिय-स्पर्श के ऋषि वाक्यों में जो ज्ञानेन्द्रियों के नाम दोहराये गये हैं, उन का अभिप्राय इन्द्रिय के गोलक तथा इन्द्रिय की शक्ति का है।

४—प्राण शब्द जो दो बार आया है, उस में ५ प्राण तथा ५ उप-प्राणों का मतलब है. जिन के निम्नलिखित नाम तथा काम हैं।

## ५—पंच प्राण।

(१) प्राण वायु—जो हृदय में रह कर मुख के रास्ते अन्दर खेंचता है।

( २ ) अपान वायु—जो गुदा में रहता है, मल मूत्र के बाहर निकालने का कार्य करता है।

( ३ ) समान वायु—यह नाभि में रहता है, जठराग्निकी सहायता से भोजन के रस को फोक से जुदा करता है।

( ४ ) उदान वायु—कण्ठ में रहता है, प्राणों को बाहर निकालता है, बोलने तथा गाने का काम इसी से होता है।

( ५ ) व्यान वायु—जो सारे शरीर में रह कर रसों को सब स्थानों पर पहुंचाता है, पसीना लाता है तथा रुधिर को परिभ्रमण कराता है।

# उप प्राणाः।

(१) नाग वायु—जो डकार लाने तथा वमन ( कु ) कराने का कार्य करता है।

(२) कूर्म-वायु—जिस से पलकों का झपकना, अङ्गों का सिकुड़ना तथा फैलाना होता है।

(३) किकल वायु—जो भूख लगाता है और छींक लाता है

(४) देवदत्त वायु—जो जम्भाई (उबासी) लाता है।

(५) धनंजय वायु—जीवन समय में स्मरण कराने का कार्य करता है और मृत्यु पश्चात् शरीर को फुलाता है।

# प्राणायाम के लक्षण ।

स व्याहृतिं स प्रणवां गायत्रिं शिरसासह ।
त्रिःपठेदायतः प्राणः प्राणायाम स उच्यते ॥१॥

अर्थः—प्रणव व्याहृतियां और शिरोभाग * के सहित गायत्रि मन्त्र से तीन बार प्राण वायु को रोक कर पढ़ने को प्राणायाम कहते हैं ।

# प्राणायाम का फल ।

प्राणश्चेदिडयापिवेत् परिमितं भूयोऽन्यया चरेत्
पीत्वापिङ्गलसमीरणमलं वध्वा त्यजेत् बामया ।
सूर्याचन्द्रमसावनेनविधिना विंवद्वयं ध्यायतः
शुद्धाःनाड़िगणाभवन्तियमिनामृमासत्रयादूर्ध्वतः

अर्थः—यदि प्राण वायु ईड़ा बाईं नासिका से पीवे तो (परिमित) कुम्भक में यथाशक्ति रोक दहिनी नासिका से छोड़े, फिर दहिनी नासिका से खींच कर बाईं से छोड़े, इसी प्रकार सूर्य और चन्द्रमा अर्थात् दाईं बाईं नासिका से प्रति

* आपोज्योतिरसोमृतंब्रह्मभूर्भुवः स्वरोम् । इति शिरोभागः ।

दिन प्राणायाम का अभ्यास करने से संयमी का ३ मास के उपरान्त नाड़ी चक्र शुद्ध हो जाता है।

दह्यन्तेध्मायमानानाम् धातुनांहि यथामलाः।
तथेन्द्रियाणां दह्यन्ते दोषाः प्राणस्य निग्रहात् २

(मनुस्मृति)

अर्थः—जैसे अग्नि में तपाने से धातुओं के मल नष्ट हो जाते हैं ऐसे ही प्राणों के निग्रह से इंद्रियों के दोष भी भस्म हो जाते हैं।

योगांगाऽनुष्ठनात् अशुद्धि क्षये ज्ञानदीप्तिराविवेकः ख्यातेः।

(पातञ्जलि)

अर्थः—प्रतिक्षण उत्तरोत्तर काल में अशुद्धि का नाश और ज्ञान का प्रकाश होता है और जब तक परम गति नहीं, तब तक उसके आत्मा का ज्ञान निरंतर बढ़ता रहता है।

## पवित्रता।

पाठकगण सब से प्रथम शारीरिक और मानसिक शुद्धि करनी चाहिये जिसकी विधि मनु महाराज इस प्रकार लिखते हैं:—

अद्भिर्गात्राणि शुध्यन्ति मनः सत्येन शुध्यति ।
विद्यातपोभ्यां भूताऽऽत्मा बुद्धिर्ज्ञानेन शुध्यति॥

अर्थः—जल से शरीर की शुद्धि होती है, सच बोलने से मन शुद्ध होता है, विद्या और तप से आत्मा और बुद्धि ज्ञान से शुद्ध होते हैं ॥ शारीरिक शुद्धि के लिये मनुष्य को चाहिये कि प्रातःकाल सूर्योदय से प्रथम ग्राम से*बाहर कुछ दूर जाकर मलमूत्र को त्याग करना चाहिये । तीन बार मुत्रेंद्रिय को मिट्टी लगाकर धोवे तथा ५ पांच बार गुदा को मिट्टी लगाकर धोना चाहिये. तत् पश्चात् १० बार केवल वाम हस्त को मिट्टी लगाकर धोना चाहिये, और ७ बार दोनों हाथों को मिट्टी से धोवे, १५ के लगभग शुद्ध जल लेकर कुल्ली करे, तत् पश्चात् दंत धावन ( दांतन ) करके स्नान करे, आंखों पर जल के छींटे लगावे, ( इससे अक्षि-रोग की निवृत्ति होती है ) बालों में कंघी करे, इस प्रकार शारीरिक शुद्धि करने के पश्चात् मानसिक शुद्धि करे, किसी एकान्त स्थान में बैठकर मनको रागद्वेषादि दूषित और असत्य वृत्तियों से यत्न-पूर्वक हटाकर ईश्वर न्यायादि गुणों का चिंतन करे । पाठकगण यह स्मरण रक्खो जब तक मनुष्य अंदर से शुद्ध नहीं होता, तब तक-वह पूरा २ शुद्ध नहीं कहला सकता ।

---

*यदि कारण वश बाहर न जासके तो घर में ही सब क्रिया करनी चाहिये ।

मृत्तिकानां सहस्रैस्तु उदक कुम्भ शतैरपि ।
न शुध्यन्ति दुरात्मानो येषां भावो न निर्मलः ५

दक्षस्मृतिः

अर्थः—चाहे हज़ारों मन मिट्टी और सैकड़ों पानी के कलशों से शरीर को क्यों न धोवें वह दुरात्मा शुद्ध नहीं होता, जिस का भाव पवित्र नहीं अर्थात् जिसका मन अपना कल्याण तथा अन्य के लिये दुःख होने की अभिलाषा रखता हो, ऐसे मनुष्य कदापि शुद्ध नहीं हो सकते, अथवा जिन मनुष्यों का आत्मीय ज्ञान माया-मोह जंजाल से नष्ट हो गया है, वे असुर बुद्धि अधम मनुष्य परमेश्वर को कभी नहीं पासकते, परमेश्वर के पाने के वे ही अधिकारी हैं, कि जिन्होंने काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, तथा राग, द्वेष, ईर्षा पर विजय पाकर शास्त्रोक्त प्रबल तपस्या से निज इंद्रिय ग्राम को जीत लिया है।

अतः शारीरिक शुद्धि की अपेक्षा मानसिक पवित्रता की परम आवश्यकता है। क्योंकि यही परमेश्वर प्राप्ति के साधनों में प्रबल साधन है। यदि किसी समय मनुष्य शारीरिक शुद्धि न भी कर सके तो मानसिक शुद्धि करके भी संध्या में बैठ सकता है। किन्तु आचमन तथा मार्जन के लिये संध्या समय जल का होना परम आवश्यक है।

चन्द्रभानुशर्मा

ब्राह्मेमुहूर्त्ते बुध्यो धर्मार्थौ चानुच्चिंतयेत् ।
कायः क्लेशांश्च तन्मूलान् वेद तत्त्वार्थमेवच॥६॥

---

प्रातःकाल निद्रा त्यागने के समय निम्नलिखित मंत्र पढ़ने चाहियें:—

ओं प्रातरग्निं प्रातरिंद्रं हवामहे प्रातर्मित्रा वरुणा प्रात रश्विना । प्रातर्भगं पूषणम् ब्रह्मणस्पतिम् प्रातस्सोम मुतरुद्रं हवेम् ॥ १ ॥

अर्थः—हम प्रकाश स्वरूप तथा प्रकाश देने वाले परमेश्वर को ऐश्वर्य युक्त ऐश्वर्यवान् प्रभु को प्राण उदान के समान प्यारे प्रभु को तथा इनको स्थिर रखने वाले प्रभु को सूर्य चंद्र के रचने वाले प्रभु को बुलाते हैं । और प्रातःकाल समय में स्तुति करते हैं, ब्रह्मांडपति पुष्टिकर्ता ऐश्वर्ययुक्त अंतर्यामी तथा पापियों को रुलाने वाले जगदीश्वर की स्तुति करते हैं ।

ओं प्रातर्जितम् भगमुग्रम् हुवेमवयम् पुत्र मदितेर्योविधर्ता । आध्रश्चिद्य मन्यमानस्तुरश्चिद्राजाचिधम् भगम् भक्षित्याहः ॥ २ ॥

अर्थः—ऐश्वर्य के दाता ! तेजस्वि जयशील सूर्य को पैदा करके धारण करने वाले, तथा सबको जानने वाले, दुष्टों के दंड दाता, सबको धारण करने हारे भगवान को सेवन करता हूं ॥ २ ॥

ओं भग प्रणेत र्भगसत्यराधोभगेमांधिय मुदवाद् दन्तः । भग प्रणोजनयगोभिरश्वैर्भ्भ प्रनृभिर्नृवन्तः स्याम ॥ ३ ॥

अर्थः—हे भजनीय ! सब के उत्पादक प्रेरक ऐश्वर्यप्रद प्रभो! हमें बुद्धि दो, और रक्षा करो, और हम गाय घोड़े तथा उत्तम मनुष्यों से नियुक्त हों ॥ ३ ॥

ओं उतेदानीम् भगवन्तः स्यामोत प्रपित्व उतमध्ये अन्हाम् । उतोदिता मघवन्त्सूर्यस्य वयं देवानां सुमते स्याम ॥ ४ ॥

अर्थः- हे भगवन् ! आपकी कृपा और अपने पुरुषार्थ से हम लोग इस समय उत्तमता की प्राप्ति में ऐश्वर्य युक्त होवें, तथा हे अनंत द्रव्य देने हारे प्रभो ! हम इस प्रातः समय उत्तम विद्वान् धार्मिक लोगों की प्रज्ञा सुमति में प्रवृत्त होवें, या रहें ॥ ४ ॥

ओं भगराव भगवान् अस्तु देवास्तेनवयं भगवन्तः स्याम । तन्त्वा भगं सर्वइज्जोहवीति सनो भगपुर एताभवेह ॥ ५ ॥

अर्थः—हे समस्त ऐश्वर्य संपन्न प्रभो ! जिससे आपकी सब लोग निश्चय रूप से प्रशंसा करते हैं, सो हे प्रभो ! आप इस समय इस हमारे गृह में अग्रगामी तथा सत्कर्मों के बढ़ाने हारे होओ, जिससे कि हम ऐश्वर्यसंपन्न होकर संसार के उपकार में तन, मन, धन से प्रवृत्त हों और आप की पूजा करते रहें ॥ ५ ॥

# अर्थ सहित वैदिक सन्ध्या ।

## १—आचमन मन्त्राः ।

ओं शंनो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये । शंयोरभिस्रवन्तु नः ॥ १ ॥

अर्थः—हे सर्व प्रकाशक सर्वव्यापक तथा सबको आनंद देने हारे प्रभो ! मनोवांछित आनंद सुख भोगने और पूर्ण सुख की प्राप्ति के लिये हमें कल्याणकारी हूजिये और सुख की वर्षा चारों ओर से हम पर वर्षाइये ॥ १ ॥

## २—इन्द्रिय-स्पर्श मन्त्राः ।

ओं वाक् वाक्—हे सब की रक्षा करने हारे प्रभो ! मेरी वाणी और जिह्वा को शुद्ध पवित्र और मीठी बनाओ ।

ओं प्राणः प्राणः—हे सर्व रक्षक प्रभो ! मेरे प्राण तथा उपप्राण निरंतर अपना कार्य करने में प्रवृत्त रहें और मेरे वशवर्ती होकर रहें ।

ओं चक्षुः चक्षुः—हे व्यापक जगदीश्वर ! मेरे दोनों नेत्र निरंतर शुभ देखने वाले हों ।

ओं श्रोत्रं श्रोत्रं—हे सर्वान्तर्यामिन् प्रभो ! मेरे कान शुद्ध पवित्र कल्याणकारिणी वाणी को सुनें ।

ओं नाभिः—हे रक्षक प्रभो ! मेरी उत्पादक शक्ति बलवान् हो ।

ओं हृदयम्—हे जगत् पते ! मेरा हृदय तथा अंतःकर्ण शुद्ध तथा निर्मल रहे ।

ओं कंठः—हे नियामक प्रभो ! मेरा कंठ हमेशा सुंदर शब्द युक्त रहे ।

ओं शिरः—हे अखिलेश्वर ! मेरा मस्तिष्क हमेशा तरोताज़ा तथा नवीन आविष्कार कर्ता हो।

ओं बाहुभ्यां यशोबलम्—हे व्यापक प्रभो ! मेरे दोनों भुजाओं को यश और बलकी प्राप्ति कराओ।

ओं करतल कर पृष्ठेः—हे रक्षक परमेश्वर ! मेरी हथेली तथा हथेली की पीठ रोग रहित होकर ताड़न पालन करती हुई मुझे यश बल देने हारी हो।

( इन उपरोक्त ऋषि वाक्यों द्वारा जिस २ अंगका नाम आवे उस २ अंग को छूना चाहिये और मनकी प्रवृत्ति भी उधर ही करनी चाहिये )

## ३—मार्जन मंत्राः।

ओं भूः पुनातु शिरसि—प्राणों से प्यारा परमेश्वर ! तथा सारे जगत् का प्राण जो परमेश्वर है, वह शिर को पवित्र करे।

ओं भुवः पुनातु नेत्रयो—दुःख रहित दुःख से छुड़ाने हारा प्रभु आंखों को पवित्र करे।

ओं स्वः पुनातु कंठे---सुखों के देने वाला सुख स्वरूप परमात्मा कंठ को पवित्र करे।

ओं महः पुनातु हृदये---सब से बड़ा सबका पूज्य ईश्वर हृदय को शुद्ध करे।

ओं जनः पुनातु नाभ्याम्---सब जगत् का परमेश्वर! नाभि को पवित्र करे।

ओं तपः पुनातु पादयोः---पापियों को दंड देने वाला प्रभु! पैरों को पवित्र करे।

ओं सत्यं पुनातु पुनः शिरसि---सत्य स्वरूप अविनाशी परमात्मा शिर को फिर पवित्र करे।

ओं खंब्रह्म पुनातु सर्वत्र---सर्व व्यापक महान् प्रभु सबको पवित्र करे।

( उपरोक्त मंत्रों से जिस २ अंगका नाम आवे, उस २ अंग पर मध्यमा अनामिका उंगली से जल के छींटे देने चाहियें )

---

# ४—प्राणायाम मन्त्रः ।

ओं भुः ओं भुवः ओं स्वः ओं महः ओं जनः
प्राणप्रिय, दुःखनाशक, सुखस्वरूप, सर्वपूज्य, सब का पिता
ओं तपः ओं सत्यम् ।
सर्वशक्तिमन् न्यायकारी एक रस

( उपर्युक्त मन्त्र का अर्थ मार्जन मन्त्र में भी आगया है )

इस उपर्युक्त मन्त्र को पढ़ते हुए, प्रथम स्व प्राण वायु वश करने के लिए बाईं नासिका द्वारा धीरे २ बाहर का वायु खेंच कर कोष्ट में पूरक करे, फिर कोष्ठ में वायु पूर्ण हुए २ समय पर भी इस मन्त्र का जाप करे । और फिर दहनी नासिका द्वारा शनैः शनैः वायु को छोड़े और मन्त्र जपता जाय, इसी प्रकार फिर दहनी नासिका द्वारा खेंच कर मन्त्र पढ़ें और रोक कर मन्त्र पढ़ें, और बाईं नासिका से छोड़ता हुआ मन्त्र पढ़े, इस प्रकार ३ तीन आवृत्ति करने से १ प्राणायाम होता है अर्थात् ६ वार मन्त्र पढ़ने से १ प्राणायाम होता है । ऐसी १० प्राणायाम नित्य प्रति प्रातःसायं करने से चित्त की शुद्धि और मन की एकाग्रता अवश्य होती है, आरोग्य बढ़ता है तथा अनेक शारीरिक रोगों से मनुष्य छूट जाता है । मनुष्य के शरीर में ७२ करोड़ ७२ लाख १० हज़ार २०० एक नाड़ी हैं प्राणायाम करने से इन सम्पूर्ण नाड़ियों की हवा शुद्ध हो जाती है ।

## ५—अघमर्षण मन्त्रः।

ओं ऋतञ्च सत्यञ्चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत।
ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः॥ १॥
ओं समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो अजायत।
अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतोवशी॥२॥
ओं सूर्य्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्
दिवञ्च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः॥ ३॥

ऋ० मण्डल १० सू० १९१

अर्थ—पूर्ण प्रकाश स्वरूप परमेश्वर की सामर्थ्य से वेद और प्रकृति भली प्रकार प्रकाशित हुई, और उसी सामर्थ्य से प्रलय हुई, और उसी से मेघ मण्डल तथा समुद्र बना॥ १॥ मेघ मण्डल और समुद्र बनने के पीछे दिन और रात्रि बन कर काल विभाग हुआ॥२॥ जगद्धर्ता परमात्मा ने सूर्य चन्द्र को तथा प्रकाशमान और प्रकाश-रहित लोकों को रचा तथा इन के मध्यस्थ आकाश तथा अन्य लोक लोकान्तरों को बनाया॥३॥

विशेष सूचना—इस मन्त्र में यह बतलाया गया है कि परमात्मा के सहज स्वभाव से यह सारी सृष्टि उत्पन्न हुई है

वेद से लेकर पृथिवी पर्य्यन्त जो यह जगत् है, सो यह सब ईश्वर के सामर्थ्य से ही प्रकाशित हुआ है, और ईश्वर सब को उत्पन्न करके तथा सब में व्यापक होकर अन्तर्यामी-रूप से सब के पाप पुण्यों को देखता हुआ सत्य न्याय से यथावत् फल देता है। इसी अन्तर्यामी के साक्षात्कार से मनुष्य के हृदय की गांठ खुल जाती है। जैसाकि लिखा है— भिद्यते हृदय ग्रन्थी छिद्यन्ते सर्व संशयाः । क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे ॥ )

# मनसा परिक्रमा मन्त्रः ।

ओं प्राची दिगग्निरधिपतिरसितो रक्षिता दित्या इषवः । तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु । योऽ३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥ १ ॥

अर्थ—पूर्व दिशा में प्रकाश स्वरूप स्वामी अन्धकार से रक्षा करने वाला है, सूर्य की किरणें * बाण रूप हैं,

* जिस प्रकार बाणों से अपनी रक्षा होती है और शत्रुओं का नाश किया जाता है, इसी प्रकार सूर्य की किरणों से अनुकूल सेवियों की रक्षा और विरुद्ध सेवन करने वालों का नाश होता है।

उस स्वामि के लिए आदर हो, रक्षक के लिए आदर हो, उन बाणों के लिए आदर हो, इन सब के लिए आदर हो, जो हम से द्वेष करता है, जिस से हम द्वेष करते हैं, उस द्वेष भाव को इन अधिपति रक्षक बाणों के दाढ़ ( न्याय ) में रखते हैं ।

विशेष सूचना—स्वामी रक्षक और उस के बनाए हुए सूर्य आदि पदार्थों से हमारी रक्षा हो और हमारे द्वेष भाव का नाश हो, तथा हम सब आपस में मित्र होकर रहें ।

ओं दक्षिणा दिगिन्द्रोऽधिपति स्तिरश्चि-राजी रक्षिता पितर* इषवः । तेभ्यो नमोऽधि-पतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नमः एभ्योअस्तु योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥ २ ॥

अर्थ—दक्षिण दिशा में परमैश्वर्य्यवान् रूपी राजा ( स्वामी ) वेद विरुद्ध चलने वाले दुष्टजनों के कुसंग रूप हानि से ज्ञानि पुरुषों के सत्य उपदेश रूपी बाणों द्वारा हमारी रक्षा करने वाला है ॥२॥ ( शेष पूर्ववत् )

---

* ऋतवः पितरः शतपथ २-३-२-२४

" " " २-५-२-१२

ऋग्वेद मण्डल १ सूक्त १६४ मन्त्र १२ सायणभाष्य

विशेष सूचना—इस मन्त्र में यह बतलाया गया है कि हे परमेश्वर! आप हमारे दहनी तरफ़ भी हैं और टेढ़ी चाल वाले सर्पादिक से तथा कुटिल नीति वाले मनुष्यों से पितरों द्वारा (अर्थात् बुज़ुर्गों ज्ञानियों उपदेशकों द्वारा ज्ञान दिला कर हमारी रक्षा करते हैं ॥ २ ॥

"पितर अर्थात् बुज़ुर्ग हमेशा दहनी तरफ बैठते हैं"
[ पितर का अर्थ ब्राह्मण ग्रन्थों में ऋतु भी आया है ]

**ओं प्रतीची दिग्वरुणोऽधिपति पृदाकू रक्षितान्नमिषवः । तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ॥ ३ ॥**

अर्थ—हे सर्वोत्तम ईश्वर! आप पश्चिम अर्थात् पीठ की तरफ हैं, (होकर) और अन्न ओषधियों द्वारा विषधारी जहरीले प्राणियों से हमारी रक्षा करते हैं। अन्न बाण तुल्य हैं। शेष पूर्ववत् ॥ ३ ॥

विशेष सूचना—इस मन्त्र में यह भाव दर्शाया गया है कि सर्वोत्तम परमेश्वर हमारी पीठ के पीछे भी है और वही अन्न तथा ओषधियों द्वारा हमारी रक्षा करता है। (अन्न तथा ओषधियां हमेशा पीछे भण्डार में ही रक्खी रहा करती

हैं और आवश्यकता पड़ने पर निकाली जाया करती हैं ) इन का सत्कार यही है इन की हमेशां यत्न पूर्वक रक्षा करनी चाहिए तभी जीवन रह सकता है।

ओं उदीचीदिक् सोमोऽधिपतिः स्वजो रक्षिता शनिरिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो-नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः

अर्थ—उत्तर दिशा में शान्त स्वरूप परमेश्वर स्वामी है। बिजली, वर्षा, आन्धी-रूप बाणों द्वारा कीट, पतंग पिस्सु, मच्छर तथा अशुद्ध वायु आदि हानि-कारक पदार्थों से हमारी रक्षा करता है। शेष पूर्ववत् ॥ ४ ॥

विशेष सूचना—परमेश्वर की लीला कोई नहीं जान सकता, देखते २ आन की आन में आंधी, वर्षा, बिजली आ जाती है, और जिन जन्तुओं तथा गन्दी वायु से सांसारिक लोग रोगी हुए २ रोते रहते हैं, वह एक दम काफूर होजाते हैं। यह बात प्रत्यक्ष है कि आंधी से मच्छर आदि जन्तु सब भाग जाते हैं। घर का अशुद्ध वायु भी निकल जाता है। और वर्षा से शांति प्राप्त हो जाती है तथा चारों ओर आनन्द ही आनन्द हो जाता है।

ओं ध्रुवा दिग्विष्णुरधिपतिः कल्माषग्रीवो-
रक्षिता वीरुध इषवः । तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो
नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु
योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः

अर्थ—हे सर्व-व्यापक प्रभो ! आप नीचे की ओर व्यापक हैं, और काली गर्दन वाले सर्पों से तथा हरित रंग वाले वृक्षों से वनस्पतियों द्वारा हमारी रक्षा करते हैं, आप के लिए तथा उन वनस्पतियों के लिए सत्कार हो, शेष पूर्ववत् ॥ ५ ॥

विशेष सूचना—इस मन्त्र में यह बतलाया कि वनस्पतियों अर्थात् जड़ी बूटियों द्वारा ही क्रूर सर्पों से हमारी होती है और वह नीचे की ओर ही निकलती हैं और नीचे पृथिवी में ही क्रूर सर्प रहते हैं।

ओं ऊर्ध्वादिग् बृहस्पतिरधिपतिः स्वित्रो
रक्षिता वर्षमिषवः । तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो
नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु
योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः

अर्थ—हे महान् प्रभो ! आप ऊपर की ओर व्या-

पक होकर हमारे स्वामि तथा रक्षक हैं। श्वेत कुष्ठादि रोगों से वर्षा-रूपी बाणों द्वारा हमारी रक्षा करते हैं, आप के तथा उन के लिए हमारा सत्कार हो, शेष पूर्व०

विशेष सूचना—इस मन्त्र में यह बात है कि पंच-तत्त्वों में आकाश ही सब से बड़ा तत्त्व हैं, अतः यहां पर बृहस्पति शब्द ईश्वर के लिए दिया गया है। दूसरे वर्षा भी आकाश से गिरती है, और वर्षा के बाणों द्वारा कुष्ठ की ओषधि तय्यार करके हमारी कुष्ठ से रक्षा हो सकती है। अथवा वर्षा का जल एकत्रित करके आवश्यकतानुसार उस में स्नान करें और पीवें यही इस का सत्कार है।

# उपस्थान मन्त्रः ।

ओं उद्वयं तमसस्परिस्वः पश्यन्त उत्तरम् ।
देवं देवत्रा सूर्य्यमगन्मज्योतिरुत्तमम् ॥ १ ॥

यजु० अ० ३५ मन्त्र १४

अर्थ—हे परमेश्वर ! आप सब अन्धकार से परे प्रकाश स्वरूप प्रलय के पीछे भी सदा एक रस वर्तमान सूर्यादि देवों के प्रकाशक चर अचर के आत्मा ज्ञान स्वरूप और सब से उत्तम जानकर हम शुद्ध भाव से आप के शरणागत हुए हैं, हमारी रक्षा कीजिए ॥१॥

विशेष सूचना—इस मन्त्र में यह बतलाया है कि ईश्वर अज्ञान-रूप अन्धकार से परे है, चर अचर का आत्मा तथा आनन्द स्वरूप है, जैसे स्वयं प्रकाश प्रभु को मनुष्य ज्ञान चक्षु से ही देख सकता है, और कोई साधन नहीं है।

ओं उदुत्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः दृशे विश्वाय सूर्य्यम् ॥ २ ॥

यजु० अ० ३३ मन्त्र ३१

अर्थ—जिस प्रकाश स्वरूप ईश्वर से वेद प्रकाशित हुए उस परमेश्वर के आत्मा की प्राप्ति के लिए हम उपासना करते हैं, "उद्वहन्ति केतवः" जिस को श्रुतियों तथा सृष्टि के नियम दृष्टान्त-रूप होकर बतला रहे हैं ॥

विशेष इस मन्त्र का भाव यह है कि वेद और सारा ऐश्वर्य्य प्रभु से ही प्रगट हुआ है, सृष्टि के नियम तथा वेद सारे संसार को परमेश्वर का मार्ग दिखलाते हैं।

ओं चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः आ प्रा द्यावा पृथिवी अन्तरिक्षꣳ सूर्य्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च स्वाहा ॥ ३ ॥

यजु० अ० १३ मन्त्र ४६

अर्थ—जड़ चेतन जगत् का आत्मा और चर अचर जगत् का प्रकाशक जो सूर्य है, आप उस के

प्रगट करने वाले हैं, राग द्वेष रहित पुरुषों के आप प्रकाशक हैं, पृथिवी और आकाश आप की सामर्थ्य में हैं। १० प्राण ११वें मन को आप गति देने वाले हैं। विद्वानों के हृदय में आप चित्रित (प्रकाशित) रहते हैं, दुःख नाश करने वाला जो बल है वह हमारे हृदयों में प्रकाशित रहे ॥ ३ ॥

विशेष सूचना—इस मन्त्र में यह बतलाया है, संसार में चित्र विचित्र तथा अद्भुत जो अग्नि सूर्य, चन्द्रादिक पदार्थ हैं, इन सब का प्रकाशक परमेश्वर है और यह सब पदार्थ परमेश्वर को ही दर्शा रहे हैं, भूमि आकाश तथा मध्य लोक सब उस प्रभु की सामर्थ्य में हैं, वह बल का भण्डार है। हम को चाहिए कि मन वाणी कार्य से बल की याचना करते हुए बलवान् होकर जीवें।

ओं तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् ।
पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम
शरदःशतं प्रब्रवाम शरदः शत मदीनाः स्याम
शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात् ॥ ४ ॥

यजु० अ० ३६ मन्त्र २४

अर्थ—जो प्रभु सब का द्रष्टा विद्वानों का हितकारी

शुद्ध स्वरूप सृष्टि के पहिले था, अब है, और आगे होगा। उस प्रभु को हम लोग सौ वर्ष तक देखें, सौ वर्ष तक हम लोग जीवें, सौ वर्ष तक सुनें, सौ वर्ष बोलें, किसी के अधीन न रहें, तथा परमेश्वर की कृपा से सौ वर्ष से अधिक भी जीवें, देखें, सुनें, बोलें और और पराधीन न रहें ॥ ४ ॥

## ८—गायत्री मन्त्रः ।

ओं भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् ॥

यजु० अ० ३६ मन्त्र ३

अर्थ—प्राणों से प्यारा दुःखनाशक सुखस्वरूप सब जगत् का उत्पन्न करने हारा, ऐश्वर्य का दाता, सब का प्रकाशक शुद्ध स्वरूप ग्रहण करने योग्य जो परमेश्वर है, उस को हम लोग प्रेम भक्ति श्रद्धा से निश्चय करके अपने आत्माओं में धारण करें ( किस लिए ) वे हमारी बुद्धियों को बुरे कामों से हटाकर भले कामों में प्रवृत्त करें ।

ओं नमः शम्भवाय च मयोभवाय च

नमः शंकरायच मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च ॥

यजु० अ० १६ मन्त्र ४१

अर्थ—हे संसार के सुख देने वाले सुख स्वरूप परमेश्वर! आपको नमस्कार हो, हे मंगल-स्वरूप मंगल देने हारे परमेश्वर! आप को नमस्कार हो, हे कल्याण स्वरूप कल्याण दाता प्रभो! आप को नमस्कार हो।

## ९—वक्तव्य।

इस प्रकार सब मन्त्रों के अर्थों से परमेश्वर की उपासना करके, आगे समर्पण करे कि हे दयामय! आप की कृपा से जो २ उत्तम काम हम करते हैं, वह सब आप के अर्पण हैं, जिस से हम लोग आप को प्राप्त होकर, धर्म अर्थ, काम, मोक्ष को प्राप्त हों।

## १०—विशेष वक्तव्य।

मनुष्य को विना ब्रह्म-ज्ञान के यथार्थ सुख की प्राप्ति नहीं होसकती, यह बात निःसन्देह है, आप्त पुरुषों के वचनों से प्रमाणित है तथा वेद भी वर्णन करता है।

[ओं वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम् आदित्यवर्णम् तमसः परस्तात्। तमेव विदित्वाऽति मृत्यु मेति नान्य पंथाविद्यतेऽयनाय॥ यजु०

अर्थ—हे जिज्ञासु! [अहम्] मैं जिस [एतत्] इस पूर्वोक्त [महान्तम्] बड़े२ गुणों से युक्त [आदित्य वर्णम्] सूर्य के तुल्य प्रकाश स्वरूप [तमसः] अज्ञान वा अंधकार से [परस्तात्] अलग वर्तमान [पुरुषम्] स्वस्वरूप से सर्वत्र पूर्ण परमात्मा को [वेद] जानता हूं, [तं एव] उसी को [विदित्वा] जानकर आप [मृत्युम्] दुःखदायी मरण को [अतिएति] उलंघन कर जाते हो, किन्तु [अन्यः] इस से अलग [पंथा] मार्ग [अयनाय] अभीष्ट स्थान मोक्ष के लिए [न विद्यते] विद्यमान नहीं है।

भावार्थ—यह है कि यदि मनुष्य इस लोक तथा परलोक के सुखों की इच्छा करें, तो सब से अति बड़े स्वयं प्रकाश और आनन्द स्वरूप अज्ञान के लेश से पृथक् वर्तमान परमात्मा को जान कर ही मरणादि अथाह दुःखसागर से पृथक् हो सकते हैं। यही सुखदायक मार्ग है, इस के अतिरिक्त मुक्ति का कोई मार्ग नहीं- पाठकगण! जब कि यथार्थ शांति का साधन केवल ब्रह्म-विज्ञान ही सिद्ध हुआ, तो फिर अन्य कपोल कल्पित साधनों पर व्यर्थ परिश्रम करना मूर्खता नहीं तो और क्या है?

अतः बुद्धिमान मनुष्य को पूर्ण अधिकारी बन कर ब्रह्म तक पहुंचने के लिए प्रथम शास्त्रोक्त कर्मकाण्ड करने की आवश्यकता है, कर्मकाण्ड के किए विना मनुष्य का मन मलिन

रहता है और मलिन मन वाले मनुष्य को विवेक की प्राप्ति अत्यन्त ही दुर्लभ है। 'मलिनमनसः पुंसोविवेकादिसुदुर्लभम्'

अतः अधिक वाद विवाद के बिना मनुष्य को सन्ध्योपासन तथा अग्निहोत्रादि कर्म अन्तःकरण की शुद्धि के लिए परम आवश्यक हैं, यह बात निर्विवाद है, अतः द्विज मात्र के लिए सन्ध्या परम आवश्यक कर्म है, और देखिए संसार में कोई मनुष्य अपने साथ थोड़ासा भी उपकार करता है, तो उस का बदला जब तक नहीं देदिया जाता, तब तक उस का अहसान हृदय से दूर नहीं होता। अब सोचो, जिस दयालु ईश्वर ने हमारे ऊपर असंख्य उपकार किए हैं, उस परम पिता का सारे दिन भर में सायङ्काल प्रातःकाल दो समय भी स्मरण न करना क्या कृतघ्नता का पाप नहीं है? अतः कृतघ्नता रूपी पाप से बचने के लिए सन्ध्योपासन का करना मनुष्य मात्र के लिए परम आवश्यक कर्म है। दूसरे यह भी बात है कि जो मनुष्य दो समय सन्ध्योपासन करता है (अर्थात् एक प्रकार से ईश्वर से मिलता है) तो उस की रुचि खोटे कर्मों से हटी रहती है, और वह पाप से बचा रहता है।-पाप मनुष्य उस समय करता है, जिस समय परमेश्वर को भूल जाता है या यह समझता है कि परमेश्वर मेरे इस कर्म को नहीं देखता, और इस का दण्ड मुझे नहीं मिलेगा (तो) जो मनुष्य दोनों समय सन्ध्योपासन करता है, वह प्रातःकाल से सायङ्काल तक और सायङ्काल से प्रातःकाल तक ईश्वर को याद रखता है।

तथा मनसा परिक्रमा के मन्त्रों में जो यह बतलाया है कि परमेश्वर सब ओर है, अर्थात् सर्व-व्यापक है, तो वह ईश्वर को सर्व-व्यापक समझ कर कभी भी पाप नहीं कर सकता। अतः दिन या रात्रि के संयोग में शुद्ध चित्त होकर मन को एकाग्र करके अवश्य सन्ध्योपासन करना चाहिए।

जैसाकि :—

अहरहः संध्यामुपासीत तस्मादहोरात्रस्य संयोगे ब्राह्मण संध्यामुपासीत । उद्यंतऽस्तं यांतम् आदित्यम् अभिध्यायन् ॥

संसार में विचरते प्रकृति के ऊपर ले कृत्रिम आवरण को देख कर जो हमारे मन के भाव अशुद्ध हो जाते हैं, उन का शुद्ध करना बुद्धिमान् पुरुष के लिए सन्ध्या, उपासना, प्रार्थना तथा अग्निहोत्र से बढ़कर अन्य कर्म नहीं है।

# अथेश्वर स्तुति प्रार्थनोपासनाः ।

ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव ।
यद्भद्रं तन्न आसुव ॥ १ ॥

अर्थ—हे सकल जगत् के उत्पत्ति कर्ता! समग्र ऐश्वर्ययुक्त शुद्ध-स्वरूप सब सुखों के दाता परमेश्वर! आप कृपा करके हमारे सम्पूर्ण दुर्गुण, दुर्व्यसन और

दुःखों को दूर कीजिए, जो कल्याण कारक गुण कर्म स्वभाव और पदार्थ हैं, वह सब हम को प्रदान कीजिए॥

ओं हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्। सदाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ २ ॥

अर्थ—जो प्रकाश स्वरूप और जिस ने प्रकाश करने हारे सूर्य चन्द्रादि पदार्थ उत्पन्न करके धारण किए हैं, जो उत्पन्न हुए सब जगत् का प्रसिद्ध स्वामी एक ही चेतन स्वरूप था, जो सब जगत् के उत्पन्न होने से पूर्व वर्तमान था सो इस भूमि और सूर्यादि को धारण धारण कर रहा है, हम लोग उस सुख-स्वरूप शुद्ध परमात्मा के लिए ग्रहण करने योग्य योगाभ्यास और अति प्रेम से विशेष भक्ति किया करें ॥ २ ॥

ओं य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः। यस्यच्छायाऽमृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥३॥

अर्थ—जो आत्म-ज्ञान का दाता शरीर आत्मा और समाज के बल का देने हारा जिस की सब विद्वान् लोग

उपासना करते हैं, और जिस का प्रत्यक्ष सत्यस्वरूप शासन और न्याय अर्थात् शिक्षा को मानते हैं, जिस का आश्रय ही मोक्ष सुखदायक है, जिस का न मानना अर्थात् भक्ति न करना ही मृत्यु आदि दुःख का हेतु है, हम लोग उस सुख-स्वरूप सकल ज्ञान के देने हारे परमात्मा की प्राप्ति के लिए आत्मा और अन्तःकरण से भक्ति अर्थात् उसी की आज्ञा पालन करने में तत्पर रहें।

ओं य प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो बभूव । य ईशेऽस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ ४ ॥

यजु० अ० २३ । मन्त्र ३ ॥

अर्थ—जो प्राण वाले और अप्राणी-रूप जगत् का अपनी अनन्त महिमा से एक ही विराजमान राजा है, जो इस मनुष्यादि और गौ आदि प्राणियों के शरीर की रचना करता है, हम उस सुख-स्वरूप सकलैश्वर्य के देने हारे परमात्मा के लिए अपनी सकल उत्तम सामग्री से विशेष भक्ति करें ॥ ४ ॥

ओं येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढ़ा येन स्वः

स्तीभितं येन नाकः । यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेमः ॥ ५ ॥

यजु० अ० ३२ । मन्त्र ६ ॥

अर्थ—जिस परमात्मा ने तीक्ष्ण-स्वभाव वाले सूर्य आदिक भूमि का धारण । जिस जगदीश्वर ने सुख और मोक्ष को धारण किया है, जो आकाश में सब लोकलोकान्तरों को विशेषमान-युक्त [ अर्थात् जैसे आकाश में पक्षी उड़ते हैं वैसे ] सब लोकों का निर्माण करता और भ्रमण कराता है, हम लोग उस सुख-दायक कामना करने के योग्य पारब्रह्म की प्राप्ति के लिए सब सामर्थ्य से विशेष भक्ति करें ॥ ५ ॥

ओं प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परिता बभूव । यत्कामास्तेजुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥ ६ ॥

ऋ० मं० १० । सू० १२१ । मन्त्र १० ॥

अर्थ—हे सब प्रजाके स्वामि परमात्मन् ! आप से भिन्न दूसरा कोई जन इन सब उत्पन्न हुए जड़ चेतनादिकों को नहीं तिरस्कार करता है, अर्थात् आप

सर्वोपरि हैं, जिस २ पदार्थ की कामना वाले हम लोग आप का आश्रय लेवें और वांछा करें, उस की कामना हमारी सिद्ध होवे, जिस से हम लोग धन ऐश्वर्यों के स्वामी होवें ॥ ६ ॥

ओं स नो बन्धुर्जनिता स विधाताधामानि वेद भुवनानि विश्वा। यत्रदेवा अमृतमानशा-नास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त ॥ ७ ॥

यजु० अ० ३२ । मन्त्र १० ॥

अर्थ—हे मनुष्यो ! वह प्रभु हम लोगों को भ्राता के समान सुखदायक सकल जगत् का उत्पादक वह सब कर्मों का पूर्ण करने हारा सम्पूर्ण लोक-मात्र और नाम स्थान जन्मों को जानता है और जिस सांसारिक दुःख सुख से रहित नित्यानन्द-युक्त मोक्ष स्वरूप धारण करने हारे परमात्मा में मोक्ष को प्राप्त होके विद्वान् लोग स्वेच्छा-पूर्वक विचरते हैं, वही परमात्मा अपना गुरु आचार्य और राजा तथा न्यायाधीश है, हम लोग मिल कर सदा उस की भक्ति किया करें ॥ ७ ॥

ओं अग्ने नयसुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् । युयोध्यस्मज्जुहुराण-मेनो भूयिष्ठान्ते नम उक्तिं विधेम ॥ ८ ॥

यजु० अ० ४० । मन्त्र १६ ॥

अर्थ-हे प्रकाश तथा ज्ञान-स्वरूप ! सब जगत् को ज्ञान तथा प्रकाश देने हारे सकल सुख दाता परमेश्वर ! आप सम्पूर्ण विद्या युक्त हैं, कृपा करके हम लोगों को विज्ञान का राज्यादि ऐश्वर्य्य की प्राप्ति के लिए अच्छे धर्म-युक्त आप्त लोगों के मार्ग से सम्पूर्ण प्रज्ञान और उत्तम कर्म प्राप्त कराइये और हम से कुटिलता युक्त पाप रूप कर्म को दूर कीजिए, इस कारण हम लोग आप की बहुत प्रकार की स्तुति-रूप नम्रता-पूर्वक प्रशंसा सदा किया करें और सर्वदा आनन्द में रहें ॥ ८ ॥

नोट—उपर्युक्त आठ मन्त्र प्रत्येक स्त्री, पुरुष, बाल, वृद्ध, युवा को कण्ठ होने चाहिए।

## अथाचमन मन्त्रः ।

ओं अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा ॥१॥ प्रथम आचमन

अर्थ—यह सुखप्रद जल प्राणियों का आश्रय भूत है, यह हमारा कथन शोभन हो।

ओं अमृतापिधानमसि स्वाहा ॥२॥ दूसरा आचमन

अर्थ—यह निश्चय पोषक है।

ओं सत्यं यशः श्रीर्मयि श्रीः श्रयतां स्वाहा ॥३॥

( इस से तीसरा आचमन )

अर्थ—मुझ में सचाई कीर्ति लक्ष्मी स्थित हो ।

नोट—इस के पश्चात् निम्न लिखित मन्त्रों द्वारा जल से अङ्गों का स्पर्श करें ।

## अङ्गन्यासः ।

ओं वाङ्म आस्येऽस्तु । ( इस मन्त्र से मुख )

अर्थ—मेरे मुख में वागिन्द्रिय स्थित हो ।

ओं नसोर्मे प्राणोऽस्तु । (इस से नासिका के छिद्र)

अर्थ—मेरे दोनों नासिका के छिद्रों में प्राण वायु वा घ्राणेन्द्रिय स्थिर हो ।

ओं अक्ष्णोर्मे चक्षु रस्तु । ( इस से दोनों नेत्र )

अर्थ—मेरी आंखों में चक्षु इन्द्रिय स्थिर हों ।

ओं कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु । ( इस से दोनों कान )

अर्थ—मेरे दोनों कानों में श्रवणेन्द्रिय स्थित हो ।

ओं बाह्वोर्मे बलमस्तु । ( इस से दोनों बाजू )

अर्थ—मेरी दोनों भुजाओं में बल शक्ति हो ।

ओं ऊर्वोर्मे ओजोऽस्तु । ( इस से दोनों जंघा )

अर्थ—मेरी जंघाओं वेग हो ।

ओं अरिष्टानि मेऽङ्गानि तनूस्तन्वा मे सहसन्तु

( इस मन्त्र से सम्पूर्ण शरीर में मार्जन करना )

अर्थ—मेरा देह और मेरे देह के अवयव, अपहुत अवाधित हों।

## अथाग्नि होत्रम्।

ओं भूर्भुवः स्वः।

( यह तीनों ईश्वर के नाम हैं इन का अर्थ सन्ध्या में आचुका है ) इस मन्त्र से द्विज गृह से अग्नि लावें अथवा कपूर में दीवासलाई लगावें।

ओं भूर्भुवः स्वर्द्यौरिव भूम्ना पृथिवी वऽव-रिम्णा। तस्याते पृथिवी देवयजनि पृष्ठेऽग्नि-मन्नादमन्नाद्यायादधे ॥ १ ॥ यजु० अ०३। मं० ५

अर्थ—विद्वान् लोग जिस में यज्ञ करते हैं, ऐसी प्रसिद्ध पृथिवी जिस की पीठ पर अन्तरिक्ष और स्वर्ग-लोक में स्थित नक्षत्रों के बहुमूल्य से जैसे आकाश विराजमान है। ऐसे ही सर्वाश्रय-भूत पर्वादि अन्न को भस्म करने वाले अग्नि को शुद्ध भक्षण योग्य अन्नो-त्पत्ति के लिए मैं यजमान स्थापित करता हूं।

( इस मन्त्र को पढ़ कर अग्नि को रख दे )

ओं उद्बुधस्वाग्ने प्रतिजागृहि त्वमिष्टापूर्त्ते सꣳसृजेथा मयंच । अस्मिन्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन् विश्वेदेवा यजमानश्चसीदत ॥

( इस मन्त्र से अग्नि को सिलगावे )

अर्थ—हे ज्ञान-स्वरूप प्रभो ! यह अग्नि प्रगट हो और खूब प्रकाशित हो, यह यजमान और यज्ञादि कार्य और धर्मार्थ स्थान बनाना आदि शुभ कार्य्यों को करे, इस अग्नि सहित स्थान में तथा इस से भी उत्तम स्थान में विद्वान् लोग और यजमान बैठे ।

## समिधादानम् ।

ओं अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्द्धस्व चेद्ध वर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसे नान्नाद्येन समेधय स्वाहा ॥

( इदमग्नये इदन्न मम* )

( इस मन्त्र से १ समिधा की आहुति देना )

---

* इस मन्त्र से घृत की आहुति दीजाय अगले ३ मन्त्रों से ३ समिधा की आहुति दीजाय, ऐसे भी कई एक विद्वान् मानते हैं ।

अर्थ--इस अग्नि का यह काष्ठ आधार है, इस काष्ठ से प्रदीप्त ही बढ़े, और हम को भी ईश्वर बढ़ावे, काष्ठसे पुत्रादि से पशवों से बड़ी कान्ति से तथा अन्नादि से भली प्रकार बढ़ावे।

ओं समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथीम् आस्मिन् हव्या जुहोतन स्वाहा।

( इदमग्नये इदन्न मम )

अर्थ--हे विद्वान् लोगो! तुम लकड़ियों से अग्नि का सेवन किया करो और इस अग्नि को अतिथि के तुल्य समझ कर घृतादिकों से प्रकाशित करो, इस अग्नि में सर्व प्रकार का शाकल्य होमो [ डालो ]।

ओं सुसमिद्धाय शोचिषे घृतं तीव्रं जुहोतन अग्नये जातवेदसे स्वाहा॥

( इदमग्नये जातवेदसे इदन्न मम )

अर्थ--हे मनुष्यो! अच्छे प्रकार जलाए हुए शुद्ध दीप्त वाले सबों में विद्यमान् अग्नि के लिए सब प्रकार शुद्ध किए हुए घृत को होमे।

**ओं तन्त्वा समिद्भिरंगिरो घृतेन वर्द्धयामसि बृहच्छोचायविष्ठय स्वाहा ॥**

(इदमग्नये अङ्गिरसे इदन्न मम, इस से तीसरी समिधा।

अर्थ--सब को प्राप्त होने वाला वा गमनशील अग्नि गार्हपत्य आहवनीय आदि रूप से प्रसिद्ध है, इस को समिधाओं से घृत से बढ़ाओं प्रकाश छेदनादि गुणों के कारण बढ़े और अति बलवान् प्रकाशित हों।

**ओं अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्द्धस्व चेद्ध वर्धय चास्मान् प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसे नान्नाद्येन समेधय स्वाहा** * ॥

(इदमग्नये जातवेदसे इदन्न मम) इस मन्त्र से ५ घृताहुति देना।

निम्न लिखित मन्त्रों से वेदी के चारों ओर जल प्रवाह करे।

**ओं अदितेऽनु मन्यस्व।** ( इस मन्त्र से पूर्व में )

अर्थ—हे अखण्डनीय परमात्मन् आप हमें अहिंसादि सम्पादनार्थ अनुकूलमति दीजिए।

**ओं अनुमतेऽनुमन्यस्व।** ( इस मन्त्र से पश्चिम )

अर्थ—हे अनुगत व्यापक ज्ञान स्वरूप! अनुकूलमति दीजिए।

---

* इस मन्त्र का अर्थ पीछे आचुका है।

ओं सरस्वत्यनु मन्यस्व । (इस से उत्तर दिशा में)

अर्थ—हे प्रशस्त ज्ञान स्वरूप ! अनुकूलमति दीजिए।

ओं देव सवितः प्रसुव यज्ञ पतिं भगाय दिव्यो गन्धर्वः केतपुः केतन्नः पुनातु वाचस्पतिर्वाचं नः स्वदतु ॥ यजु० दक्षिण दिशासे चारों ओर

अर्थ—हे प्रकाशक सर्वोत्पादक ईश्वर ! आप ऐश्वर्य के लिए शिल्पादि विविध यज्ञों को उत्पन्न कीजिए और यज्ञों के पालक राजा को भी उत्पन्न कीजिए। आप शुद्ध पृथिवी के धारक विज्ञान के पवित्र कर्त्ता हो, हमारी बुद्धि को पवित्र करो और आप वाणी के स्वामी हो, अतः हमारी वाणी को शुद्ध बनाओ।

# अथ आघारावाज्यहुति।

ओं अग्नये स्वाहा। इदमग्नये इदन्न मम ॥

(उत्तर में आहुति देनी चाहिए)

अर्थ—प्रकाश परमात्मा के लिए वा भौतिक अग्नि के लिए सुहुत हो।

ओं सोमाय स्वाहा। इदं सोमाय इदन्न मम ॥

(दक्षिण में आहुति देना)

अर्थ-सोम रसादि के लिए वा परमात्मा की प्री-त्यर्थ सुहुत हो।

ओं प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये इदन्न मम ॥

( मध्य भाग में )

अर्थ-प्रजाओं के पालक के लिए सुहुत हो।

ओं इन्द्राय स्वाहा। इदमिन्द्राय इदन्न मम ॥

( मध्य भाग में )

अर्थ-ऐश्वर्य्य सम्पन्न के लिए सुहुत हो।

## व्याहृति आहुतियां।

ओं भूरग्नये स्वाहा। इदमग्नये इदन्न मम ॥

अर्थ-अग्नि रूप ईश्वर के लिए सुहुत हो।

ओं भुवर्वायवे स्वाहा। इदं वायवे इदन्न मम ॥

अर्थ-वायु रूप व्यापक ईश्वर के लिए सुहुत हो।

ओं स्वरादित्याय स्वाहा। इदमादित्याय इदन्न मम॥

अर्थ-आदित्यवत् प्रकाशक ईश्वर के लिए सुहुत हो।

## प्रातःकाल के मन्त्रः ॥

ओं सूर्य्योज्योतिर्ज्योति सूर्यः स्वाहा ॥

अर्थ-[ सूर्य ] चरों का आत्मा परमेश्वर ! [ ज्योतिर्ज्योतिः ] चमकीले पदार्थों का भी प्रकाशक [ सूर्यः ] व्यापक परमेश्वर ! ( ऐसे परमेश्वर की आज्ञा पालन करके सारे जगत् के उपकारार्थ एक आहुति देता हूं )

**ओं सूर्य्योवर्च्चोज्योतिर्वर्चः स्वाहा ॥**

अर्थ-[ सूर्यः ] तेजमय परमेश्वर ! [ वर्चः ] विद्या विज्ञान प्रकाश के देने द्वारा है, [ ज्योतिः ] सूर्य प्रकाश जिस प्रकार सब जगह फैल जाता है, वैसे ही परमेश्वर [ वर्चः ] ब्रह्मतेज देने वाली विद्याओं का प्रचार हम से करावे ।

**ओं ज्योतिः सूर्य्यः सूर्य्योज्योतिः स्वाहा ॥**

अर्थ-[ सूर्यः ] सारे संसार में प्रकाश करने वाला है, [ सूर्यः ] सारे संसार का पति है, [ज्योतिः] प्रकाश तथा ऐश्वर्य्य का दाता है, ऐसे प्रभु की प्रसन्नता के लिए हम हवन करते हैं ।

**ओं सजुर्देवेन सवित्रा सजुरुषसेन्द्रवत्या-जुषाणा सूर्य्योवेतु स्वाहा ॥**

अर्थ-[ देवेन ] प्रकाश डालने वाली [ सवित्रा ] ब्रह्मबुद्धि से [ उषसा, इन्द्रवत्या ] सुन्दर रङ्ग विरङ्गी

उषा के साथ [ सजुः ] मिला हुआ [ सूर्यः ] सूर्यलोक [ सजुः ] सब जगह बराबर [ जुषाणः ] सेवन करता हुआ व्याप्त होकर हवन किए हुए पदार्थों को आनन्द से [ वेतु ] दूर २ पहुंचाने के लिए ग्रहण करें ।

## सायङ्काल मन्त्रः ॥

ओं अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा ॥

ओं अग्निर्वर्चोज्योतिर्वर्चः स्वाहा ॥

ओं अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा ॥

ओं सजुर्देवेन सवित्रा सजुरात्र्येन्द्रवत्याजुषाणो अग्निर्वेतु स्वाहा ❀ ॥

## प्रातःसायं दोनों समय आहुति देने के मन्त्रः ॥

ओं भूरग्नये प्राणाय स्वाहा ॥ इदमग्नये प्राणाय इदन्नमम

❀ इन सायंकाल के मन्त्रों में सूर्य की जगह अग्नि शब्द प्रयुक्त किया गया है, क्योंकि सूर्य के अस्त होने पर यदि कोई ज्योति है तो वह अग्नि ही है शेष शब्दों का वही अर्थ है । जो प्रातःकाल के मन्त्रों का है ।

अर्थ--यह हविः उस अग्नि के लिए है, जो हमारा प्राण है।

ओं भुवर्वायवे स्वाहा ॥ इदं वायवे इदन्न मम ॥

अर्थ--यह हवि उस वायु के लिए है, जो हमारा अपान है।

ओं स्वरादित्याय स्वाहा ॥ इदमादित्याय इदन्न मम॥

अर्थ--यह हवि उस सुख-स्वरूप आदित्य के लिए है, जो हमारे व्यान को शुद्ध करें।

ओं भूर्भुवः स्वरग्नि वायव्यदित्येभ्यः प्राणापा-
नव्यानेभ्यः स्वाहा ॥ इदमग्नि वायवादित्येभ्यः
प्राणापान व्यानेभ्य इदन्न मम ॥

अर्थ--अग्नि, वायु, आदित्य परमेश्वर हमारे प्राण अपान, व्यान को बल-युक्त करके शुद्ध करें।

ओं आपोज्योति रसोऽमृतम् ब्रह्मभूर्भुवः स्वरोम्

अर्थ--[ आपः ] शान्त [ ज्योतिः ] प्रकाश-स्वरूप [ रसः ] मनुष्य स्वरूप [ अमृतम् ] अमृत [ब्रह्म] बड़ा [भूः] सर्वाधार [ प्राण ] 'भुवः' सर्व-व्यापक [ अपान ] 'स्वः' सुख-स्वरूप।

इस मन्त्र में परमेश्वर के ६ नाम लेकर आहुति दी गई हैं

ओं यां मेधाम् देवगणाः पितरश्चोपासते तया मा मद्य मेधयाग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा ॥

अर्थ--[ यां ] जिस बुद्धि को देवगण पितर लोग धारण करते हैं, उस सात्विकी बुद्धि से मुझ को आज हे प्रकाश स्वरूप ईश्वर ! मेधा युक्त कीजिए ।

ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव । यद्भद्रं तन्न आसुव ॥

अर्थ- हे देव शुद्ध स्वरूप परमेश्वर ! आप कृपा करके हमारे सम्पूर्ण दुर्गुण दुर्व्यसन और दुःखों को दूर कीजिए, जो कल्याण कारक गुण कर्म स्वभाव और पदार्थ हैं वह सब हम को दीजिए ।

ओं हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् । सदाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥

अर्थ--जो स्व प्रकाश स्वरूप और जिस ने प्रकाश करने हारे सूर्य चन्द्रादि पदार्थ उत्पन्न करके धारण

किए हैं, जो उत्पन्न हुए सम्पूर्ण जगत् का प्रसिद्ध स्वामी एक ही चेतन-स्वरूप था जो सब जगत् के उत्पन्न होने से पूर्व वर्तमान था। सो इस भूमि सूर्यादि को धारण कर रहा है, हम लोग उस शुद्ध स्वरूप परमात्मा के लिए ग्रहण करने योग्य योगाभ्यास और अति प्रेम से विशेष भक्ति किया करें।

ओं भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यम् भर्गो देवस्य धीमहिधियोयोनः प्रचोदयात्। स्वाहा ॥

(इस मन्त्र का अर्थ पीछे सन्ध्या में आ चुका है)

ओं सर्वं वै पूर्णं ँ स्वाहा ॥



# * प्रार्थना *

हे शांति नाथ! प्रभो जब आप हमारे अशांत हृदयोंमें प्रगट होवोगे तभी हमारे अशांत हृदय क्षुद्र भाव को छोड़कर शांत होंगे, और तभी हमारे हृदय से काम क्रोध जो दुःख दायक शत्रु हैं वह छिन्नभिन्न होंगे। और शांतिदेवी अपना आसन बिछा कर विराजमान होगी। हे पिता! इस भवसागर में आपके बिना और कोई हमें शांति दाता नहीं है। हे प्रभो! इस दुःख रूप संसार में ऐसा कोई हमारा प्यारा बन्धु नहीं है जो हमारे दुःख भरे करुणाक्रन्दन को सुनकर धीरज और शांति दे। हे दयामय! इस क्लेशमय संसार में हमारा आत्मा जो कम्पायमान होरहा है। इसको सहारा देने हारे एक मात्र आप ही है। इसलिये हे शांति विधायक! आपको छोड़कर और किससे शांति भिक्षा मांगे॥

यदि किसी सांसारिक मनुष्य से मांगते हैं, तो वे भी हमारी ही तरह अशांत होरहे हैं। इसलिये हे सुखदायक पिता! आप ही त्रीतापमय प्रज्वलित ज्वाला से जलते हुओं को शांत कर सके हैं। आप ही तृष्णा रूपी अग्नि से जलते हुओं को अपनी दयारूपी जलकी वर्षा से शांत करोगे। हे प्रभो! विषय भोग रूपी अग्नि से तपते हुओं को बचाने वाला और कोई नहीं है। कृपानाथ प्रथम आपने अनेक ऋषि मुनियों को शांति दी है। प्रभो आप तो शांति के निधि हैं। हम आप को त्याग कर कहां जावें और अपने तप्त आत्मा को कहां शांत करें।

पिता जी इस कष्ट सागर में पड़े हुए चिंता रूपी अग्नि में जलते हुओं स्वार्थरूपी भूमल में लिपटे हुओं अज्ञान की रात्री में सोते हुओं और अधर्मरूपी तम में तपते हुओं को आपके विना कौन सुख शांति देने वाला है, हे करुणानिधे! इस भयंकर समय में यदि आप हमारी सुध न: लेंगे तो हम दुःख सागर में टुकड़ेर होकर गिर जावेंगे तो फिर बताईये आपकी करुणा किस काम आवेगी ? हे दीन जन सहायक! आप हमारे पिता हैं हमे पूर्ण आशा है कि आप अपने पुत्रों की प्रार्थना अवश्य श्रवण करेंगे, अशांत हृदयों को शांत करेंगे। हे मंगल-मूर्ते! जो मनुष्य सांसारिक आश्रयों को छोड़कर आपका सच्चा याचक बनकर आप से प्राथना करता है, वह कैसा ही अशांत क्यों न हो आप उसे एक वार तो शांति का प्रसाद दे ही देते हैं, और सुखमय कर देते हो। इसलिये हे अमरत्व दाता पिता आप हमारे हृदय कमल में अपना आसन स्थापन करो, जिससे हम आपके स्वरूप का अनुभव करते हुए बारंम्बार आपको नमस्ते करें। हे जीवन दाता! आप हमें सुगुण गुणों से सुभूषित करो।

हाय २ पिता जी हम कैसे मन्दभाग्य हैं कि हम सांसारिक तुच्छ नर नारियों के भय से तो पाप करने से बचते हैं, परन्तु आपकी शक्ति जो सर्वत्र व्याप्त है, उससे निर्भय होकर मन माने कुकर्म और पाप कर रहे हैं। पिताजी ज्यूं २ आप से निर्भय होते हैं, त्यूं २ दुःखों का पर्वत हमारे ऊपर आता है। प्रभो! धन्य है उस नर नारी को जिसे आप

का भय है तथा जो आपकी महिमा को देखते हुए अपनी जीभ से आपका मधुर नाम लेकर अपने आपको पवित्र करते हैं। सुमार्ग प्रकाशक प्रभो! आप हमको पल२ बारम्बार याद करना सिखलाओ, और विषय सुखों से हटाओ, प्रभो विषय सुख ही मनुष्य को धर्म के मार्ग से गिराने वाले हैं प्रभु जी जब तक हम विषय सुखों में लिप्त रहेंगे तब तक सन्मार्ग प्राप्त होना कठिन है। हे सन्मार्ग प्रदर्शक इस दुःख रूप भयानक मार्ग से निकालकर अपने आनंदमय सुमार्ग में चलाओ, ओं शांतिः ३।

## भजन।

तुम हो प्रभू चांद मैं हूं चकोरा।
तुम हो कमल फूल मैं रसका भोरा।
ज्योति तुमारी का मैं हूं पतंगा।
आनंद घन तुम ही मैं बनका मोरा॥ १॥

जैसे है चुम्बक की लोहे से प्रीति।
आकर्षण करे मोहे लगातार तोरा॥ २॥

पानी बिना जैसे हो मीन व्याकुल।
ऐसे हि तड़फावे तुमरा विछोड़ा॥ ३॥

इक बूंद जलका मैं प्यासा हूं भगवन।
अमृत की करो वर्षा हरो ताप मोरा॥ ४॥

हे जगत् माता ! आप को धन्य है, आप गिरतों को सहारा देने वाली हो। हम निराश्रय आप की शरण आप हैं, हम निर्दोष निरपराधियों को निकृष्ट दशा से निकालने वाला आपके बिना और कौन है। हे मातः ! हम सब भाई दुर्व्यसनों दुराचारों से दुःखित क्षुधित तृषित खेधित दीन हीन और पराधीन होकर आप की ओर निहार रहे हैं, इस नीच दशा में हमारा लालन पालन करने वाला आप के अतिरिक्त और कोई नहीं है, इसलिए हम निरुत्साही, निर्बल तेज हीन होकर आप की शरण आए हैं। आशा है आप हमारे कोटानुकोट पापों पर दृष्टि न डाल कर अपना सहारा दोगी। हे जगज्जननि ! हम आप की आज्ञा उलङ्घन करने वाले कुपात्र पुत्र होगए हैं। लेकिन हमें आशा है कि अवश्य कल्याण करोगी, और अनाश्रय सन्तान को अपना आश्रय दोगी। क्योंकि कुमाता भी अपनी सन्तान से प्रेम ही किया करती है, और आप तो हमारी सुमाता हैं।

हम अनाथ बालकों का आप के बिना कोई रक्षक नहीं है, कोई दुःख समुद्र से उद्धार करने वाला नहीं है, आप ही अपनी प्रबल भुजा से उद्धार करो। हे विश्वपालिनि तुम ने तो हमारे सुधार के लिए कोई यत्न शेष नहीं छोड़ा, सृष्टि की आदि में ही शिक्षा का भण्डार वेद ऋषियों से आत्मा में दिया, यह तो हमारा ही अपराध है कि ऐसी पवित्र सुखमयी पुस्तक का पढ़ना पढ़ाना, सुनना सुनाना त्याग कर विषयों में प्रमत्त हुए २ पशु-जीवन व्यतीत कर रात दिन

दुर्गति को प्राप्त होते चले जारहे हैं। परन्तु आप के सिवाय इस नीच अवस्था से निकाल कर सुख-धाम में लेजाने वाला नहीं है। यदि हम स्वयं इस समुद्र से निकलने की चेष्टा करते हैं और ज़रा भी पैर उठाते हैं तो अपनी निर्बलता के कारण गिर कर वहां के वहां ही फंसे रह जाते हैं।

जब से हम ने आप का आश्रय त्यागा है, तभी से इन मलीन विषयों में पड़ कर हमारा उत्तम जन्म व्यर्थ जारहा है और आप को बिलकुल भूल से गए हैं। जगन्नाथ! अब हम इस दशा में क्या करें, कौन यत्न करें, किस का आश्रय लें, जिस से कि इन दुर्व्यसनों से छूटें। पिता जी! अब तो आप की ही आशा आप का ही आश्रय और आप का ही भरोसा है। हे दीनदयाल! हमारा अन्तिम शब्द सुनो दुःखों से निकालकर सुखाश्रय में ले चलो, जहां हमारे आत्मा को परम आनन्द मिलें। प्रभो! हमारी सूखी मुर्झाई हुई हृदय वाटिका को प्रफुल्लित करो। हे विघ्ननाशिनि! हमारे आत्माओं में सत्य सनातन वैदिकधर्म का दृढ़-विश्वास स्थापित करो, जिस से हम अनाथ बालक संसार में आनन्द-पूर्वक जीवन व्यतीत करके अपने देश, जाति, कुटुम्ब, इष्ट, मित्रों के सुख के हेतु होवें।

हे भक्त पालक! आज हम सच्ची भक्ति से प्रेम-पूर्वक आप के सम्मुख आना चाहते हैं। परन्तु क्या करें, हमारे शिर पर अधर्म का बोझ धरा हुआ है। उस से दबे हुए आप की तरफ चल नहीं सकते, इस लिए हमारे जन्म २ के

संगृहीत पाप कर्मों के भार से छुड़ाने वाला आप के बिना कौन है । प्रभो ! इस विश्व में आप के सहारे बिना हमारा सहारा नहीं है । हमारा तो आप पर ही भरोसा है । पिता जी ! जैसे चिमनी को चारों ओर से स्याही मलीन कर देती है, वैसे ही अनेकानेक पापों ने हमारे आत्मा को ढक लिया है । इस ढकने को आप के सिवाय और कौन दूर करने वाला है । हे ज्योति-स्वरूप ! हम आप से यही विनय करते हैं कि आप हमें ऐसा बल तथा पराक्रम दो, कि जब जब हमारा पाप से युद्ध हो तब २ हमारी विजय हो । और उसे जड़ से उखाड़ दें । प्रभो ! बिना आप के बल दिए कोई कितनी ही तेजस्वी, प्रतापी बली, राजाधिराज योद्धा क्यों न हो, यह सब को अपने हस्तगत कर लेता है । परन्तु जो आप का सच्चा-भक्त है, यह उन के समीप तक नहीं आता । अतः आप हम को अपना सच्चा-भक्त बनाओ, जिस से हम पापों से अलग रहें । पिताजी ! आप के सिवाय हम निर्बल बालकों का कौन शब्द सुनेगा, और कौन प्रेम करेगा । ।पिताजी! पिता के बराबर और कौन लालन पालन कर सकता है । हे अखिलेश ! जैसे आपने बाह्य प्रकाश के लिए सूर्य उत्पन्न किया है । ऐसे ही हमारे हृदय में भी ज्योति प्रगट करो, जिस से हमें अपने शुभाशुभ कर्म मालूम हो जायँ, और अशुभ कर्म का त्याग शुभ कर्म करते हुए अपने मानव जीवन को व्यतीत करें । हे सच्चिदानन्द हम आप से सांसारिक सुखों की याचना नहीं करते हैं । हमारी याचना कुसंग

कुमार्ग कुचेष्टा आदिक कर्मों के निवृत्यर्थ है, या आप के सच्चे भक्त बनने के निमित्त है।

## भजन [ धनाच्वरी ३ ताल ]

प्रभु मेरे अब तो क्लेश हरो।
दुःख भंजन तेरो नाम सुनत हैं इस लिए कष्ट हरो ॥१॥
पाप प्रवाह में बहे जात हैं, अब प्रभु ध्यान धरो ॥२॥
शरण आप की हम शरणागत, मत प्रभु क्रोध करो ॥३॥
भक्त तिहारे हम सब, स्वामी किरपा हम पै करो ॥४॥
चन्द्रभानु अति दुखिया होकर, आप की शरण परो ॥५॥

**यतोयतः समीहसे ततो नो अभयं कुरु, शंनः कुरु प्रजाभ्यो अभयं नः पशुभ्यः।**

हे भय निवारक पिता! जहां २ आप चेष्टा करते हैं, वहां २ से हम को निर्भय करो, हम सब ओर से भयों से व्याकुल होकर आप की शरण में आए हैं, इस लिए आज अभयदान देने के लिए हमारे सामने प्रगट हो जाओ, और सब भयों से रहित कर अपनी अभय गोद में स्थान दान दो यदि यह दान हम किसी सांसारिक मनुष्य से मांगते हैं, तो वह भी यही कहते हैं कि हम स्वयं भयभीत हैं। हे भय भञ्जक पिता! हम जिस समय दुःखों से पीड़ित होते हैं, तो संसार में कोई भी हमारा रक्षक दृष्टि नहीं आता। यदि हम

किसी को अपना रक्षक समझ कर पुकारते हैं, तो वह अनेक प्रकार के भयों से भयभीत हुआ २ हमारी आर्त्तनाद को नहीं सुनता, परन्तु जब हम ज़रा भी आप का ध्यान करते हैं और रोते हुए आप की शरण में आते हैं, तो तत्काल इन शत्रुओं से बच जाते हैं। परन्तु पिताजी! हम ऐसे हत भाग्य हैं कि अभय होते ही आप को फिर भूल जाते हैं, और दुष्कर्मों में लग कर फिर दुःखी होते हैं। इस लिए हे नायक प्रभो! जिन कुकर्मों को हम आप से भिन्न होकर करते हैं। कृपा कर उन कर्मों से पृथक् करो, और जिन सुकर्मों से हम सर्वथा अभय हो सकते हैं, उन कर्मों में हमें प्रवृत्त कीजिए। केवल आप का ही भय हमारे अन्तःकरण में हो। यदि हमें आप का भी भय न रहा तो हम फिर अधर्म में प्रवृत्त हो जायगे। रोयेंगे पीटेंगे और हाय २ करेंगे। जिस के हृदय में प्रभुजी आप का भय होता है, वह पुरुष कभी दीन दुःखी नहीं रहता, वह कभी दुष्कर्म नहीं करता। पिताजी! आप की आज्ञा पालन करने में ही निर्भयता प्राप्त होती है, आप के सहारे बिना और कोई भी पदार्थ नहीं जो अभय दे, सभी पदार्थ भय से जिथड़ पिथड़ होरहे हैं।

पिताजी! जैसे जङ्गल के जीव शिकारियों से भयभीत होकर भयानक जंगल की शरण लेते हैं। तथाहि हम मृत्यु आदिक प्रबल भयों से कम्पित होकर आप की शरण में आए हैं, आप अपने पुत्रों को निर्भय करो। पिताजी! इस संसार में चोरों से, जारों से, धूर्तों से, छलियों से, कपटियों से,

अधर्मियों से और विषधारी जीव जन्तुओं से रात दिन भय, ही भय दिखलाई देता है । पिताजी ! जहां तक गिनवावें, आप के आश्रय बिना पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण अधर अपर भय ही भय है ।

परन्तु जो आप के आश्रय हैं, जिन के आप रक्षक हैं, वह मनुष्य सुख-पूर्वक इस संसार रूपी बाग़ीचे में विचरता है । इस लिए हे पिताजी ! रक्षा करो, हमें आप का विश्वास हो, हम आप के सच्चे-भक्त बन कर रहें । अनामय हे भक्त भयभञ्जन, दीनजन सहायक, कृपानाथ हमारी इस प्रार्थना को स्वीकार कर कहो, तथास्तु तथास्तु तथास्तु । ओं शांतिः ३ ॥

## भजन

पिताजी तुम पतित उधारनहार ।
दीन शरण कंगाल के स्वामी, दुःख के मोचनहार ॥१॥
इस जग माया जाल भ्रमण में, सूझे न सार असार ॥२॥
सत्य ज्ञान बिन अन्ध सम डोलें, करें असत्य आचार ॥३
पाप प्रवाह भयङ्कर जल में, डूबत हैं मंझ धार ॥ ५ ॥
तुमरी दया बिन को समरथ है, करे दीनन को पार ॥४॥

हे धर्म प्रेरक पिता ! हम धर्म रहित अपनी सन्तान को धर्मपथ पर चलाओ, अन्यथा हम शीघ्र मृत्यु के मुख में चले जावेंगे । पिताजी ! धर्म रहित होकर, हम ने बहुत कष्ट उठाये हैं । अब हम धर्म से अलग रहना नहीं चाहते, कृपा कर ऐसा बल दो कि जिस से हम अधर्म को पराजित करें ।

हे जगदीश्वर ! आप की कृपा दृष्टि बिना हम निर्बल पिता अधर्म रूपी खन्दक में गिर जावेंगे, न जाने फिर हमारी क्या गति होगी । पिताजी ! बड़ी कठिनता से जन्म जन्मान्तरों के कुसंस्कारों से दग्ध हुए २ आप की शरण आये हैं । इस हमारे असंस्कृत आत्मा को धर्माऽमृत पान कराओ । दयामय यदि आप इस समय धर्मरूपी अमृत न पिलाओगे तो यह अधर्म रूपी व्याज अपने विकराल गाल में धर दबाएगा । इस लिए आप ही रक्षा करने वाले हैं, आप ही गिरतों को उठाने वाले हैं, आप ही डूबतों को तराने वाले हैं, आप ही अधर्म की खट्वा से उठाकर वैदिकधर्म की शय्या पर सुलाने वाले हैं, आप ही अधर्मियों के जाल से छुड़ाकर स्वतन्त्रता देने वाले हैं, आप ही स्वतन्त्रता देकर सर्वोपरि बनाने वाले हैं । इस लिये हम आप ही शरण आये हैं । आप ही हमारी विनय सुनकर इच्छा पूर्ण करोगे, आप ही धार्मिक बल दोगे, जिस से हमारा अन्तरात्मा मलिन वृत्ति, मलिन इच्छा कुचेष्टा तथा कुसंस्कारों से अलग होकर और सत्य सनातन वैदिक धर्म पर आरूढ़ होकर परमानन्द को प्राप्त हो, इस लिए आप अपने कोश से धर्म धन देकर धनी करो. आप ही हमारे सखा हैं । आप ही हमारे मालिक हैं, आप ही हमारे गुरु हैं, आप ही हमारे आचार्य हैं, आप ही रक्षक, स्वामी दाता हैं । हम ने तो कभी भी धर्म पर ध्यान नहीं दिया, हम अज्ञानी बालक किस प्रकार धर्मात्मा हो सकते हैं, हम तो आप से मांगना भी नहीं जानते कि किस प्रकार मांगें, क्या

शब्द बोलें, जिस से कि आप खुश होकर भिक्षा दें। प्रभुजी! हमें वह बुद्धि दो, जिस को धारण करके हम आप की आज्ञा पालन करते हुए, आप के कृपा पात्र बनें। हे बृहस्पति! यह हमारी इच्छा-पूर्ण होनी हमारी शक्ति से तो बाहर हैं, क्योंकि हमारा आत्मा अधर्म से भरा हुआ है, वह कब धर्म की ओर जासकता है। हे सर्वेश्वर! आप की सहायता बिना इस कठिन मार्ग पर चलना कठिन है। पिताजी! हम तो तभी इस कठोर मार्ग पर चल सकते हैं, जब आप हमारे अपवित्र हृदयों में अपना पवित्र आसन स्थापित करोगे, और हम दुर्बलों को बल दोगे तथा अपनी भक्ति में लगाओगे। हे त्रिलोकेश्वर हमें आशा है कि आप हमारी प्रार्थना को सुन कर और स्वीकार करके शक्ति दोगे, क्योंकि आप के भिन्न हमारा और कोई सखा और कोई मित्र तथा और सहायक नहीं है, जो हम को अधर्म से हटाकर धर्म ओर प्रेरे, अधर्म के कारागार से निकाल कर प्यार करें। पिताजी! जिस की ओर जाते हैं, वहीं, घृणा की दृष्टि से देखता है, इस आपत्ति दशा में पिताजी और कोई हमारा रक्षक सहाय और धर्म प्रेरक नहीं है। रक्षा करो पिताजी, रक्षा करो, धन्य हो धन्य हो, पिताजी आप का प्रेम धन्य हो।

ओं शांतिः! शांतिः!! शांतिः!!!

---

## भजन

अन्त समय में हे जगदीश मुझ को,
तुमरा ही सिमरण तुमरा ही ध्यान हो।
लवलीन हो तुझ में चित्त वृत्ति मेरी।
जब तक के श्वासों में प्राण और अपान हो ॥१॥
योगी के सदृश लगाऊं समाधी।
ओंकार अक्षर का वाच्यार्थ सान हो ॥ २ ॥
न शोक हो न मोह हो न ममता किसी में।
न पीड़ा हो तन को न कुछ दुःख भान हो ॥३॥
मेरे आत्मा का निवास हो वहां पर।
जहां तेरे सुख सम्पत का उत्तम स्थान हो ॥४॥

हे दीन बन्धो! हम अन्धकार में पड़े हुओं को अपनी ज्योति का दर्शन दो, हम सविनय आप को नमस्ते करते हैं, आज हम सब आर्यगण आप के पास अपनी दीनता दरिद्रता सुनाने आए हैं, आज हम सब आर्यगण आप के द्वार पर अपनी निर्बलता सुनाने आए हैं। कृपा करके हम अधीर निर्बलों को धैर्य दो, जिस से कि हम कष्टों के आने पर अधीर दुःखी मुह्यमान न होकर आप का चिन्तन करते हुए, आनन्द-पूर्वक अपना जीवन व्यतीत करें। हे सर्वाधार! संसार में सब को सहारा मिल सकता है। परन्तु निर्बल दीन पराधीन पुरुष को आप के भिन्न और कोई शरण देने

वाला नहीं है, क्योंकि आप दीनदयाल दीनानाथ और दीन-पाल हैं। इस लिए पिताजी! जो आप के दासों का दास होकर आप की शरण लेता है, उस को दामुज किसी प्रकार का दुःख नहीं होता और जो मनुष्य आप का परित्याग करके और किसी मूर्त्यादिक से प्रार्थना करता है, उस को लेशमात्र भी सुख नहीं होता। हे पिताजी! हम तो इतने अवगुणों भरे हुए हैं कि मारे शर्म के आप के पास भी नहीं आसकते, यदि आभी जायँ तो शब्द उच्चारण नहीं कर सकते, क्योंकि हम पापी और कृतघ्न हैं। पिताजी! जब हम आप भक्तों की और अपनी दशा को अवलोकन करते हैं, तो पृथिवी आकाश और दिन रात का अन्तर पाते हैं, हमें तो चारों ओर शोक समुद्र अज्ञान तथा अन्धकार के अतिरिक्त और कुछ भी दृष्टि गोचर नहीं होता, दममय जब हम आप के उपकारों को स्मरण करते हैं, अपनी कृतघ्नता को विचारते हैं तो हा हाकार के सिवाय कुछ नहीं बनता। पिताजी! आप की आज्ञा उलङ्घन करके किस प्रकार आप के सन्मुख आ सकते हैं और किस मुख से शब्द उच्चारण कर सकते हैं धिक्कार है हमारे जीवन को कि हम आप को सर्वज्ञ सर्वद्रष्टा जान कर भी पाप करते हैं, और फिर बनना चाहते हैं। खैर पिताजी! हम आप की सन्तान हैं! दया करो, फिर ऐसा नहीं करेंगे। हम बुरे हैं भले हैं, ऊंच हैं या नीच हैं, धर्मात्मा हैं या पापी हैं, जो कुछ हैं सो आप के हैं, हमारे

रक्षक आप हैं, अब तो रोते हुए आप के ही पास आए हैं, हमारी आवाज़ को आप के बिना कोई नहीं सुन सकता, कोई विपत्ति से नहीं निकाल सकता, कोई सद्गति नहीं दे सकता, और कोई दया नहीं कर सकता, इस लिए कृपा करो कृपा करो, कृपा करो। ओं शांतिः ३

---

## भजन

पिता परम सुनिए विनय इक हमारी।
द्वारे पै तेरे हैं आए भिखारी॥
अति क्लेश से हृदय पीड़ित हमारे।
विपत्ति न हम से जाये सहारी॥ १॥
है अज्ञान का तिमिर हम सब पै छाया।
दिखाई न देवे है ज्योति तुमारी॥ २॥
असत्य और मिथ्या का लीना सहारा।
कपट दम्भ से आयु सारी है हारी॥ ३॥
विषय भोग में रात दिन को बिताया।
स्वार्थ ने है सुध बुध सारा बिसारी॥ ४॥
दुराचारी दुष्टों का साथ हम को भाया।
धर्मभाव से सर्वथा हुए आरी॥ ५॥

हे सर्वज्ञ तुझ से भला क्या कहें हम।
मनीषी हो तुम जानो अन्दर की सारी ॥ ६ ॥
आज्ञा तेरी भंग करते रहे हैं।
पिता मूर्खता हम से हुई है भारी ॥ ७ ॥
तेरा नाम है पतित पावन दयामय।
लेओ शरण में हम को आनन्दकारी ॥ ८ ॥
तेरे यश को गावें सदा सारे रल मिल।
होवे अन्त में वास तुझ में हमारी ॥ ९ ॥

हे हृदयेश्वर ! आज हम सम्पूर्ण भ्रातृगण मिल कर असत्य मार्ग पर चलते हुए दुःखी होकर सत्य की भिक्षा मांगने के लिए आए हैं, आप सत्य स्वरूप हो, जो कुछ संसार में सत्य प्रतीत होता है, वह सब आप ही से है, संसार में जो नरनारी आप से सत्य ग्रहण करके उस के आश्रय रहता है, वह यावत् दुःखों से छूट कर अमृत को प्राप्त होता है। इस लिए पिताजी ! हमें इस मन्त्र का पाठ कराओ।

असतोमा सद्गमय तमसोमा ज्योतिर्गमय मृत्योर्मामृतंगमय ॥

हे भक्त जनेच्छा पूरक हमें असत्य मार्ग से अलग कर सत्य की ओर लेजाइये ! हमारी सूखी हुई हृदय रूप भूमि में सत्य का प्रवाह प्रवाहित कीजिए, जिस से हम सब आर्य्य-गण सत्य के बन्धन में बन्ध जायँ । पिताजी ! जिस प्रकार किसी खाद्य पदार्थ में मक्खी गिर जाने से वह घृणित हो जाता है तिस ही प्रकार यह आपका दिया पवित्र मनुष्य जन्म बिना सत्य के घृणा स्पद हो रहा है पिता जी ! अब हमें अधर्म के गढ़े से निकालकर अपने सत्य धाम का निवास दीजिये । हे प्रभु ! हमें सत्य के बल से बली करो, जिससे आपकी महिमा का प्रचार करने में सामर्थ्य हो, पिता जी जिस हृदय में सत्य नहीं वह हृदय शून्य है, जिसके आत्मा में आपका विश्वास नहीं उसे कहीं शांति नहीं, वह जिधर देखता है, महा घोर अंधकार दिखलाई देता है, उसका हृदय निन्दित तर अधर्म अत्याचार और असत्य की अग्नि से विदग्ध रहता है पिता जी मनुष्य इस संसार में संपूर्ण ऐश्वर्य सम्पूर्ण सम्पत्ति का मालिक हो सकता है, पंडित मानी ज्ञानी धनवान् होकर संसार में यशस्वी भी हो सकता है । परन्तु आप के अटल विश्वास बिना संसार में शांति को प्राप्त नहीं हो सकता । हे दीनबन्धो ! क्या हम सारी आयु दुःख में ही व्यतीत करेंगे ? पिताजी ! आप सब की सुध लेने वाले हो, कृपा करके आप अपने पवित्र कर कमलों से हमारा

स्पर्श करो और अपने चरणों में रक्खो, पिता जी आप जानते हैं जब छोटे बच्चों को भय होता है तो वह रोता हुआ आंसु बहाता हुआ दौड़ कर अपने पिता की छाती से लिपट कर अपने दुःखों का वर्णन करता है और वहां आने से ही उस के सम्पूर्ण दुःख दूर होजाते हैं, शांति मिल जाती है, अभय हो जाता है। इसी प्रकार हम भी अनेकानेक व्यथाओं से पीड़ित होकर दुःखों को भोगते हुए रोते पीटते हुए आंसू बहाते आप के द्वार पर आए हैं, कृपानाथ कृपा करो २। तन्मे मनः शिव संकल्प मस्तु। हे कल्याण कारक प्रभो! हम अपने मन की दशा किस को सुनावें, रात दिन कुविचार, कुसंकल्प उठते रहते हैं, पिता जी! हमारे मनको शुद्ध करो, हे दीनानाथ! जब कभी हम १ कदम आप की तरफ़ आते हैं तो यह पापी मन हम को १० कदम पीछे धकेल देता है, फिर हम ऐसे गढ़े में जाकर गिरते हैं कि निकलना कठिन हो जाता है। कभी मोह, कभी अभिमान और कभी क्रोध की चोटी पर चढ़ जाते हैं, पिता जी! समुद्र की लहरों की गिनती होनी सम्भव है पर इस पापी मन के कुसंपलकों की संख्या असंख्यत्र है, हे दुःख बिनाशक पिता! आप के बिना हमारी इस हृदय वेदना को कौन मिटा सकता है, और कौन इस पापी मन की शुद्ध

कर सकता है, प्राण नाथ ! आओ हमारे हृदयों में निवास करो, हम सब मिलकर आप की पूजा सेवा प्रतिष्ठा करेंगे और आप हमें धर्मोपदेश करना जिस से हमारा मन हमारे वश होए, पिता जी इस हृदय मंदिर में आप के विराजमान होने से ही इसकी शोभा होगी। दीनदयाल हृदय में आप का निवास नहीं है, वह हृदय नहीं है, बल्कि श्मशान है, पिता जी ! इस मन ने अपनी तीव्र कुवासनाओं से हमारी सर्वशक्ति को नष्ट कर दिया है, यही दुष्ट हमे सांसारिक प्रलोभनों में फंसाकर हमारी दुर्दशा कराता है, कृपासिन्धु कृपा करके इस की दुष्टता को दूर करो, पिता जी आज हम सब आर्यगण इस मन के दुःखों से दुःखित हो कर हाहाकार मचाते आप की शरण आये हैं क्योंकि आपके अतिरिक्त हमारा और कोई कष्ट दूर करने वाला नहीं है, पिता जी हमारे बराबर और कौन हतभाग्य होगा जो रात दिन इस पापी मनके अधीन होकर दुःखों को भोगता रहे। पिता जी ! हमारे हृदयों में विराजमान हुजिये, दर्शन दो, और मनको ऐसा दास बनाओ कि आप को छोड़ कर और किसी पदार्थ में न जाए, आशा है कि हमारी दुःख भरी आवाज़ को सुनोगे और आशीर्वाद दोगे कि तथास्तु ३ ॥

# भजन ।

मेरा मन मुझ को कैसे सतावे, कैसे सतावे० ।

मैं समझूं मन समझे नाहीं, उल्टे मार्ग में मुझ को लेजावे ।

झूट कपट छल शिक्षा देवे, पाप सागर में मुझको डुबावे ।

कभी पूर्व कभी पश्चिम जावे, कभी उत्तर कभी दक्षण धावे ।

सत्य संग का संग न करता, खोटी संगत की कथा सुनावे ।

मन पापी कपटी अति परबल, मुझ अधीन की पेश न जावे ।

---

# अथ स्वस्तिवाचनम्।

अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् । होतारं रत्नधातमम् ॥ १ ॥ स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनो भव । सचस्वा नः स्वस्तये ॥२॥ ऋ० मं० १ । सू० १। मन्त्र १ । ९ ॥

स्वस्तिनो मिमीतामश्विना भगः स्वस्ति देव्यदितिरनर्वणः । स्वस्ति पूषा असुरो दधातु नः स्वस्ति द्यावापृथिवी सुचेतुना ॥ ३ ॥ स्वस्तये वायुमुप ब्रवामहै सोमं स्वस्ति भुवनस्य यस्पतिः । बृहस्पतिं सर्वगणं स्वस्तये स्वस्तय आदित्यासो भवन्तु नः ॥ ४ ॥ विश्वे देवा नो अद्या स्वस्तये वैश्वानरो वसुरग्निः स्वस्तये । देवा अवन्त्वृभवः स्वस्तये स्वस्ति नो रुद्रः पात्वंहसः ॥ ५ ॥ स्वस्ति मित्रावरुणा स्वस्ति पथ्ये रेवति । स्वस्ति न इन्द्रश्चाग्निश्च स्वस्ति नो अदिते कृधि ॥ ६ ॥ स्वस्ति पन्थामनु-

चरेम सूर्य्याचन्द्रमसाविव । पुनर्ददताघ्नता जानता सङ्गमे-
महि ॥ ७ ॥ ऋ० मं० ५ सू० ५१ ॥ ये देवानां यज्ञिया
यज्ञियानां मनोर्यजत्रा अमृता ऋतज्ञाः । ते नो रासन्ता-
मुरुगायमद्य यूयं पात स्वस्तिभि सदा नः ॥ ८ ॥

ऋ० मं० ७ । अ० ३ । सू० ३५ ॥

येभ्यो माता मधुमत्पिन्वते पयः पीयूषं द्यौरदितिर-
द्रिबर्हाः । उक्थशुष्मान् वृषभरान्त्स्वप्नसस्तां आदित्यां
अनुमदा स्वस्तये ॥ ९ ॥ नृचक्षसो अनिमिषन्तो अर्हणा
बृहद्देवासो अमृतत्व मानशुः । ज्योतीरथा अहिमाया
अनागसो दिवो वर्ष्माणं वसते स्वस्तये ॥ १० ॥ सम्राजो
ये सुवृधो यज्ञमाययुरपरिह्वृता दधिरेदिवि क्षयम् । तां
आविवास नमसा सुवृक्तिभिर्महो आदित्यां अदितिं स्वस्तये
॥ ११ ॥ को वः स्तोमं राधति यं जुजोषथ विश्वे देवासो
मनुषो यतिष्ठन । को वोऽध्वरं तु विजाता अरं करद्यो
नः पर्षदत्यंहः स्वस्तये ॥ १२ ॥ येभ्यो होत्रां प्रथमामा-
येजे मनुः समिद्धाग्निर्मनसा सप्तहोतृभिः । त आदित्या

अभयं शर्म यच्छत सुगा नः कर्त सुपथा स्वस्तये ॥१३॥
य ईशिरे भुवनस्य प्रचेतसो विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च मन्तवः।
ते नः कृतादकृतादेनसस्पर्यद्या देवासः पिपृता स्वस्तये
॥ १४ ॥ भरेष्विन्द्रं सुहवं हवामहेऽहोमुचं सुकृतं दैव्यं
जनम्। अग्निं मित्रं वरुणं सातये भगं द्यावापृथिवी मरुतः
स्वस्तये ॥ १५ ॥ सुत्रामाणं पृथिवीं द्यामनेहसं सुशर्माण-
मदितिं सुप्रणीतिम्। दैवीं नावं स्वरित्रामनागसमस्रवन्तीमा
रुहेमा स्वस्तये ॥ १६ ॥ विश्वे यजत्रा अधि वोचतोतये
त्रायध्वं नो दुरेवाया अभिहुतः। सत्यया वो देवहूत्या
हुवेम शृण्वतो देवा अवसे स्वस्तये॥ १७ ॥ अपामीवामप
विश्वामनाहुतिमपारातिं दुर्विदत्रामघायतः। आरे देवा
द्वेषो अस्मद्युयोतनोरुणः शर्म यच्छता स्वस्तये ॥ १८ ॥
अरिष्टः स मर्त्तो विश्व एधते प्र प्रजाभिर्जायते धर्मणस्परि।
यमादित्यासो नयथा सुनीतिभिरति विश्वानि दुरिता
स्वस्तये ॥ १९ ॥ यं देवसोऽवथ वाजसातौ यं शूरसाता
मरुतो हिते धने। प्रातर्यावाणं रथमिन्द्रसानसिमरिष्यन्तमा

रुहेमा स्वस्तये ॥ २० ॥ स्वस्ति नः पथ्यासु धन्वसु स्वस्त्य३प्सु वृजने स्वर्वति । स्वस्ति नः पुत्रकृथेषु योनिषु स्वस्ति राये मरुतो दधातन ॥ २१ ॥ स्वस्ति रिद्धि प्रपथे श्रेष्ठा रेक्णस्वस्त्यभि या वाममेति । सा नो अमा सो अरणे निपातु स्वावेशा भवतु देवगोपाः ॥ २२ ॥ ऋ० मंडल १० । सू० ६३ ॥

इषे त्वोर्ज्जे त्वा वायवस्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मण आप्यायध्वमघ्न्या इन्द्राय भागं प्रजावतीरनमीवा । अयक्ष्मा मा वस्तेन ईशत माघशꣳसो ध्रुवा अस्मिन् गोपतौ स्यात् बह्वीर्यजमानस्य पशून् पाहि ॥ २३ ॥ यजु० अ० १ । मन्त्र १ ॥

आनो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतोऽदब्धासो अपरीतास उद्भिदः । देवा नो यथा सदमिद्वृधे असन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवेदिवे ॥ २४ ॥ देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतांदेवानांꣳरातिरभि नोनिवर्त्तताम् । देवानाꣳ सख्यमुपसेदिमा वयं देवा न आयुः प्रतिरन्तुजीवसे ॥ २५ ॥

तमीशानंजगतस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम्। पूषा नो यथा वेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥ २६ ॥ स्वस्ति न इन्द्रोवृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः । स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥ २७ ॥ भद्रं कर्णेभिः शृणुयामदेवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः । स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवा ᳪ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः ॥ २८ ॥ यजु० अ० २५ । मन्त्र १४ । १५ । १८ । १९ । २१ ॥

अग्न आयाहि वीतये गृणानो हव्यदातये । निहोता सत्सिबर्हिषि ॥ २९ ॥ त्वमग्ने यज्ञाना ᳪ होता विश्वेषा ᳪ हितः । देवेभिर्मानुषे जने ॥ ३० ॥ साम० छन्द आ० प्रपा० १ । मन्त्र १ । २ ॥

ये त्रिषप्ताः परि यन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रतः । वाचस्पतिर्बला तेषां तन्वो अद्य दधातु मे ॥ ३१ ॥ अथर्व कां० १ । अनु० १ । सू० १ । मन्त्र १ ॥

इति स्वस्तिवाचनम् ।



# अथ शान्तिप्रकरणम् ।



शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शन्न इन्द्रावरुणा रातहव्या । शमिन्द्रासोमा सुवित्रताय शंयोः शन्न इन्द्रापूषणा वाजसातौ ॥ १ ॥ शं नो भगः शमु नः शंसो अस्तु शन्नः पुरन्धिः शमु सन्तु रायः । शं नः सत्यस्य सुयमस्य शंसः शं नो अर्य्यमा पुरुजातो अस्तु ॥ २ ॥ शं नो धाता शमु धर्त्ता नो अस्तु शं न उरूची भवतु स्वधाभिः । शं रोदसी बृहती शं नो अद्रिः शं नो देवानां सुहवानि सन्तु ॥ ३ ॥ शं नो अग्निर्ज्योतिरनीको अस्तु शं नो मित्रावरुणावश्विना शम् । शं नः सुकृतां सुकृतानि सन्तु शं न इषिरो अभिवातु वातः ॥ ४ ॥ शं नो द्यावापृथिवी पूर्वहूतौ शमन्तरिक्षं दृशये नो अस्तु । शं न ओषधीर्वनिनो भवन्तु शंनो रजसस्पतिरस्तु जिष्णुः ॥ ५ ॥ शन्न इन्द्रो वसुभिर्देवो अस्तु शमादित्येभिर्वरुणः सुशंसः । शन्नो रुद्रो रुद्रे-

भिर्जल्लाषः शं न स्त्वष्टा ग्नाभिरिह शृणोतु ॥ ६ ॥ शं नः सोमो भवतु ब्रह्म शं नः शंनोग्रावाणः शमु सन्तु यज्ञाः । शं नः स्वरूणां मितयो भवन्तु शं नः प्रस्वः शम्वस्तु वेदिः ॥ ७ ॥ शं नः सूर्य उरुचक्षा उदेतु शं नश्चतस्त्रः प्रदिशो भवन्तु । शं नः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु शं नः सिन्धवः शमु सन्त्वापः ॥ ८ ॥ शं नो अदितिर्भवतु व्रतेभिः शंनो भवन्तु मरुतः स्वर्काः । शंनो विष्णु शमु पूषा नो अस्तु शंनो भवित्रं शम्वस्तु वायुः ॥ ९ ॥ शंनो देवः सविता त्रायमाणः शंनो भवन्तूषसो विभातीः । शंनो पर्जन्यो भवतु प्रजाभ्यः शं नः क्षेत्रस्य पतिरस्तु शम्भुः ॥ १० ॥ शंनो देवाः विश्व देवा भवन्तु शं सरस्वती सह धीभिरस्तु । शमभिषाचः शमु रातिषाचः शंनो दिव्याः पार्थिवाः शन्नो अप्याः ॥ ११ ॥ शं नः सत्यस्य पतयो भवन्तु शंनो अर्वन्तः शमु सन्तु गावः । शं नः ऋभवः सुकृतः सुहस्ताः शंनो भवन्तु पितरो हवेषु ॥ १२ ॥ शंनो अज एकपाद्देवो अस्तु शंनोऽहिर्बुध्न्यः शं

समुद्रः । शंनो अपांनपात्पेरुरस्तु शं नः पृश्निर्भवतु देव-
गोपा ॥ १३ ॥ ऋ० मं० ७ । सू० ३५ । मन्त्र १–१३ ॥

इन्द्रो विश्वस्य राजति । शं नोऽस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे ॥ १४ ॥ शंनो वातः पवताᳬशं नस्तपतु सूर्य्यः । शं नः कनिक्रदद्देवः पर्जन्यो अभि वर्षतु ॥ १५ ॥ अहानि शं भवन्तु नः शᳬरात्रीः प्रतिधीयताम् । शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शं न इन्द्रावरुणा रातहव्या । शन्न इन्द्रा पूषणा वाजसातौ शमिन्द्रासोमा सुविताय शंयोः ॥ १६ ॥ शंनो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये । शंय्यो रभिस्रवन्तु नः ॥ १७ ॥ द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष ᳬ शान्तिः । पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः । वनस्पतयः शान्ति-र्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वᳬशान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ॥ १८ ॥ तच्चक्षुर्देवहितं पुर-स्ताच्छुक्रमुच्चरत् । पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शत ᳬ शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम-शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात् ॥ १९ ॥ यजु० अ० ६३

मन्त्र ८ । १० । ११ । १२ । १७ । २४ ॥

यज्जाग्रतो दूर मुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति दूरङ्गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकन्तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥ २० ॥ येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः । यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥ २१ ॥ यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु । यस्मान्नऋते किञ्चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥ २२ ॥ येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्परिगृहीतममृतेन सर्वम् । येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥ २३ ॥ यस्मिन्नृचः सामयजूꣳषि यस्मिन् प्रतिष्ठितारथनाभाविवाराः । यस्मिꣳश्चित्तꣳ सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥ २४ ॥ सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयते ऽभीशुभिर्वाजिन इव । हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥ २५ ॥ यजु० अ० ३४ । मन्त्र १–६ ॥

स नः पवस्व शङ्गवे शं जनाय शमर्वते । शं राजन्नोषधीभ्यः ॥ २६ ॥ साम० उत्तरार्चिक प्रपा० १ । मन्त्र १ ॥

अभयं नः करत्यन्तरिक्षमभयं द्यावापृथिवीउभे इमे ।
अभयं पश्चादभयं पुरस्तादुत्तरादधरादभयं नो अस्तु ॥२७॥
अभयं मित्रादभयममित्रादभयं ज्ञातादभयं पुरोयः । अभयं
नक्तमभय दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु ॥२८॥
अथर्व० कां० १९ । सू० १७ । मन्त्र ५–६ ॥

इति शांति प्रकरणम् ।

---

भया दस्याग्नि स्तपति भयात्तपति सूर्यः ।
भयादिंद्रश्च वायुश्च मृत्युर्धावति पंचमः ॥ १ ॥
अशब्द मस्पर्श मरूप मव्ययम् तथा रसं नित्यमगंधवच्चयत् ।
अनाद्यनंतं महतः परं ध्रुवं निचाय्यतं मृत्यु मुखात् प्रमुच्यते
तमीश्वराणां परमं महेश्वरं तंदेवतानां परमं च दैवतं ।
पतिं पतीनां परमं परस्तात् विदामदेवं भुवनेशमीड्यम् ॥३॥
न तत्र सूर्यो भातिन चंद्रतारकं नेमाविद्युतो भांति कुतोऽयमग्निः
तमेव भांतमनु भाति सर्वं तस्य भासासर्वमिदं विभाति ॥ ४
यो देवोऽग्नौ योऽप्सु योविश्वं भुवनमाविवेश ।
य ओषधीषु यो वनस्पतिषु तस्मै देवायनमोनमः ॥ ५ ॥

# आरती

जय जगदीश हरे। भक्त जनन के संकट। क्षण में दूर करे।

जो ध्यावे फल पावे दुःख विनशे मनका,

सुख सम्पति घर आवे कष्ट मिटे तन का ॥ १ ॥

मात पिता तुम मेरे शरण गहूं किसकी,

तुम बिन और न दूजा आश करूं जिसकी ॥ २ ॥

तुम पूरण परमात्मा तुम अन्तर्यामी,

परम ब्रह्म परमेश्वर तुम सब के स्वामी ॥ ३ ॥

तुम करुणा के सागर तुम पालन कर्ता,

मैं मूरख खलकामी कृपा करो भर्ता ॥ ४ ॥

तुम ही एक अगोचर सब के प्राणपति,

किस विध मिलूं दयामय तुमको मैं कुमति ॥ ५ ॥

दीना बन्धु दुःख हर्ता तुम रक्षक मेरे,

अपने हाथ उठाओ द्वार पड़ा हूं तेरे ॥ ६ ॥

विषय विकार मिटाओ पाप हरो देवा,

श्रद्धा भक्ति बढ़ाओ सन्तन की सेवा ॥ ७ ॥

# संक्षिप्त सूचीपत्र ।

## ला० दौलतराम एण्डसंज़ पुस्तक विक्रेता

### लुहारी दरवाज़ा, लाहौर ।

| | | |
|---|---|---|
| रामायण तुलसी कृत, सटीक | | मूल्य ४।), ५), ६) |
| ,, ,, मूल | ,, | १॥), २), ४) |
| महाभारत पूर्ण दो जिल्दें सजिल्द | ,, | ८) |
| ,, सबलसिंह सजिल्द | ,, | ४) |
| सुखसागर पूर्ण सजिल्द | ,, | ८) |
| गीता भाषा टीका ,, | ,, | १।।।) |
| ,, समहात्म्य ,, | ,, | १॥) |
| दोहावली ,, | ,, | १।।।) |

सत्यार्थ प्रकाश २॥), संस्कारविधि १।), पञ्चमहायज्ञविधि ,,

## उपन्यास ।

राजस्थान की वीर रानियां ॥।), सती वृत्तान्त सचित्र १॥), हनूमान १।), नलदमयन्ती ।), ।–), सावित्री ।), द्रौपदी

।), कर्ण ।), स्त्रीधर्म प्रश्नोत्तरी ।) स्त्रीधर्म प्रकाश दोनों भाग।=) स्त्री सङ्गीत माला ॥=), सूरदास ॥), आर्य्यगायन १।), बागो-बहार ।॥), गुलबकावली ॥), बैताल ॥), सिंहासन ॥), भक्ति का मार्ग ॥), दयानन्दप्रकाश २) दो बहिनें ॥), आदर्श महिला ॥=), लार्ड किचनर १), नवरत्न १॥), प्रल्हाद ≡), =), गोपी-चन्द ≡), गर्भगीता –), जपजी साहब =), साढ़ेतीनयार ।॥) चान्द तारा ।॥), अद्भुत हत्याकारी ≡), बीचक कबीर ॥), केसर गुलाब ॥), होली चौताल ≡) =), हरिचन्द =), कीचक वध =), पूर्णभक्त –)॥, सारंगा सदा वृक्ष ≡), आदर्श नारी =)

इस के अतिरिक्त हर प्रकार की पुस्तकें

मिलने का पता—

ला० दौलतराम एण्डसन्ज़ लुहारी दरवाज़ा, लाहौर ।

# स्वाध्याय के लिए उपयोगी पुस्तकें

सत्यार्थ प्रकाश २॥), संस्कार विधि १।), भर्तरि शतक ॥।), गीता सटीक १॥।), न्याय दर्शन २), सांख्य दर्शन १।), पाराशर स्मृति ॥=, ध्यानयोग प्रकाश १॥), विनय पत्रिका १।), आनंद संग्रह १), सत्योपदेश माला १), श्रीमद्दयानंद प्रकाश २॥), पंचमहा यज्ञविधि ।), भक्ति का मार्ग ॥), हमारे स्वामी ।-), पुष्पाञ्जलि ॥-, उर्दू ।≡), अथर्ववेद का स्वाध्याय १), यजुर्वेद का स्वाध्याय १।, मनुष्यों की उन्नति १), कल्याण का मार्ग ।), शयन भाष्य≡), वैदिक पाठ माला ।), हनूमान १।), आर्य्य-गायन १।), नल दमयंती ।), ।-), स्त्री संगति माला ॥=), स्त्री सुधार ।-), सावित्री ।), कथा ।), द्रौपदी ।), प्रश्नोत्तरी ।), स्त्रीधर्मप्रकाश दोनों ।=), आदर्श नारी ।), सङ्गीत रामायण २=), सङ्गीत महाभारत २=)

इसके अतिरिक्त सब प्रकार की सामाजिक, सनातिनी पुस्तकें मिलने का पताः—

लाला दौलतराम एण्डसन्ज़

पुस्तक विक्रेता लुहारी दरवाजा लाहौर।